ISSN 2456-4818

जनवरी-मार्च 2017

वर्ष-49 अंक - 1

अंतरिक्ष विज्ञान विशेषांक

मूल्य ₹ 20

वैज्ञानिक

वैज्ञानिक

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका

भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र के सौजन्य से प्रकाशित

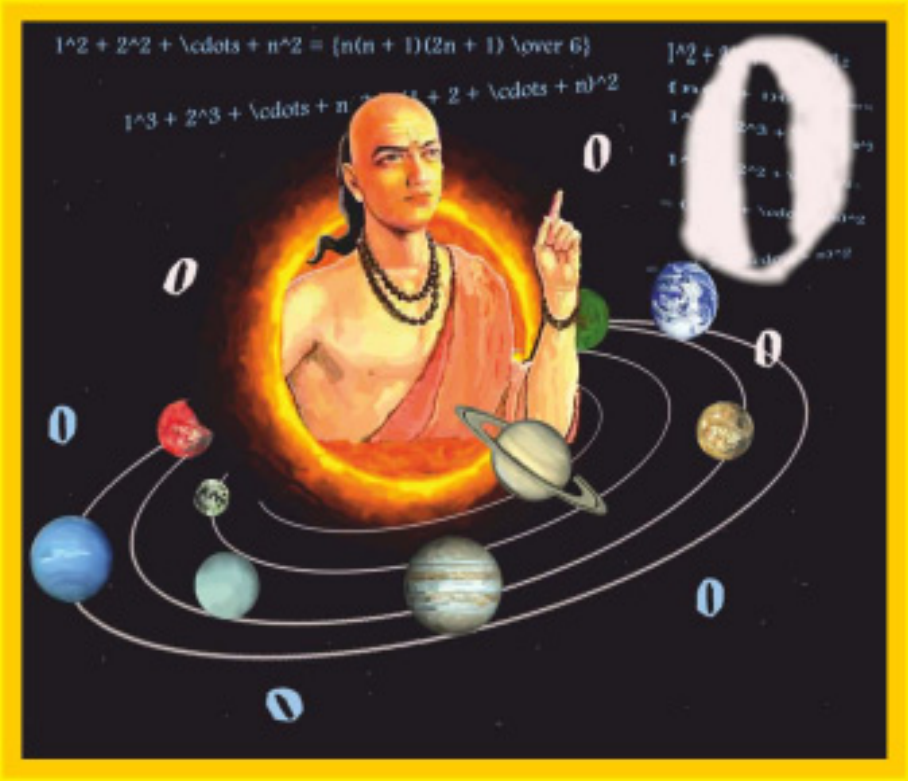

खगोल शास्त्री एवं गणितज्ञ आर्यभट

अनुलोम-गतिस् नौ-स्थस् पश्यति अचलम् विलोम-गम् यद्-वत्।
अचलानि भानि तद्-वत् सम-पश्चिम-गानि लङ्कायाम् ।।

(आर्यभटीय गोलपाद ९)

अंतरिक्ष में भारत ने रचा इतिहास

प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी वैज्ञानिकों को बधाई देते हुये

इंडियन स्पेस रिसर्च ऑर्गेनाइजेशन (इसरो) ने 15 फरवरी को अपने मिशन के तहत एक साथ 104 उपग्रह लॉन्च कर इतिहास रच दिया. एक साथ 104 उपग्रहों के सफल प्रक्षेपण की ऐतिहासिक उपलब्धि पर राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, रक्षामंत्री मनोहर पर्रिकर समेत कई मंत्रियों ने इसरो को बधाई दी है.

राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने कहा, 'एक साथ 104 उपग्रहों के सफल प्रक्षेपण की ऐतिहासिक उपलब्धि पर इसरो को बधाई. इस उपलब्धि के लिए पूरे देश को इसरो पर गर्व है. इसरों के इस प्रदर्शन ने भारत की अंतरिक्ष क्षमताओं को साबित किया है. मैं आग्रह करता हूं कि इसरो हमारे अंतरिक्ष क्षमताओं की प्रगति के लिए प्रयास जारी रखे.'

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इसरो को बधाई दी. उन्होंने ट्वीट किया, 'मैं इस असाधारण उपलब्धि पर इसरो के वैज्ञानिकों की पूरी टीम को बधाई देता हूं.'

इसरो के मुताबिक सुबह करीब 9:28 मिनट पर इन सभी उपग्रहों को लेकर पीएसएलवी 37 ने श्री हरिकोटा के सतीश धवन स्पेस सेंटर से उड़ान भरी. इसके करीब 17 मिनट बाद रिमोट-सेंसिंग कार्टीसेट-2 को कक्षा में स्थापित कर दिया गया है. इसरो ने करीब 28 मिनट के अंदर सभी 104 सैटेलाइट को अपनी-अपनी कक्षा में सफलतापूर्वक स्थापित कर दिया. आज जिन सैटेलाइट को प्रक्षेपित किया गया उनमें 101 विदेशी उपग्रह शामिल थे, जिन्हें पृथ्वी से करीब 500 किमी ऊपर सूर्य-समकालिक (सन-सिंक्रोनस) कक्षा में प्रक्षेपित किया गया.

लॉंच हुए उपग्रहों में तीन भारतीय, 88 अमेरिकी और शेष इजरायल, कजाखिस्तान, नीदरलैंड्स, स्विट्जरलैंड और संयुक्त अरब अमीरात के उपग्रह हैं. इन उपग्रहों का संयुक्त भार 1,500 किग्रा है. इसमें 650 किग्रा का रिमोट-सेंसिंग कार्टीसेट -2 और 15-15 किग्रा के दो छोटे उपग्रह IA और IB शामिल हैं.

वैज्ञानिक

वर्ष - 49 अंक - 1

जनवरी - मार्च 2017

सम्पादक

श्री विपुल सेन

vsen@barc.gov.in, vipkavi@gmail.com

सम्पादन मंडल

डॉ अर्चना शर्मा

श्री प्रवीण दुबे

श्री संजय पाठक

श्री संतोष कुमार निगम

♦ **व्यवस्थापक** ♦

श्री सत्यवान बंसल

sbansal@barc.gov.in

♦ **व्यवस्थापन मंडल** ♦

श्री डी.एन.सिंह

श्री राजेश कुमार

श्री संजय गोस्वामी

श्री अनिल अहिरवार

सदस्यता शुल्क आजीवन

व्यक्तिगत : ₹400

संस्थागत : ₹1000

भुगतान हेतु स्टेट बैंक आफ इंडिया खाता संख्या : 34185199589 IFS code : SBIN0001268

कृते : हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद'

Pay to : Hindi Vigyan Sahitya Parishad

कृपया सदस्यता हेतु ई-भुगतान की रसीद अथवा चेक भुगतान अपने पूरे पते के साथ सचिव के पते पर भेजें.

खाता संख्या - SBI 34185199589

कार्यालय

'वैज्ञानिक', हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,

सूचना प्रभाग, सेंट्रल कांप्लेक्स,

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्राम्बे, मुंबई-400 085

Email : hvsp@barc.gov.in,

सभी पद अवैतनिक हैं

ISSN 2456-4818

'वैज्ञानिक' में छपे लेखों का दायित्व लेखकों का है.

मूल्य : 20 रुपये

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय - 4

लेख

1. अनंत है अंतरिक्ष अभियान - इसरो
   विपुल सेन 'लखनवी' - 7
2. जैव-रासायनिक प्रक्रियाएं और नैनो-प्रौद्योगिकी
   मणि प्रभा -14
3. वनस्पति विज्ञान के अध्ययन में जीवाश्मों का महत्व
   डॉ.हेमलता पंत -19
4. ग्रह नक्षत्र वाटिका
   डॉ.नवीन कुमार बोहरा
   डॉ.प्रवीण गहलोत -24
5. अंतरर्राष्ट्रीय प्रकाश और प्रकाश-आधारित प्रौद्योगिकियों का वर्ष - 2015
   मनीष मोहन गोरे -27
6. लोगों को मौत के मुंह से वापस लाने का जुनून
   उत्तम सिंह गहरवाल -30
7. जल-वायु प्रदूषण के कारण और बचने के उपाय'
   डॉ. सरोज शुक्ला -32
8. शैशव काल में दूध में विषाक्त रसायनों का खतरा
   ललित कुमार सिंघानिया -36
9. उपयोगी वनस्पति पपीता
   डॉ.देवेश कुमार गुप्ता -39
10. पीड़कनाशी रसायन और मृदा प्रदूषण
    डॉ.दिनेश मणि -43
11. छात्रवृत्ति से करें विज्ञान शिक्षा की राह आसान
    मनिष श्रीवास्तव -46
12. महान गणितज्ञ आर्यभट
    सुश्री प्राची कनुश्री -49
13. गूलर का महत्व
    डॉ. दया शंकर त्रिपाठी *-54*
14. भारत में बौद्धिक संपदा अधिकार और प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम
    अनिल कुमार -57

विज्ञान समाचार - संजय गोस्वामी -60

1. *ब्लैक होल का रहस्य*
2. *जेम्स वेब अंतरिक्ष दूरबीन*
3. *मंगल का सबसे बड़ा चंद्रमा फोबोस*
4. *एलियन की खोज नाकाम*
5. *अंतरिक्ष में रोबोट*

मनोगत -62

वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली -5

सम्पादकीय

यह हर्ष का विषय है कि वर्ष 2017 का शुभारंभ भारत द्वारा अंतरिक्ष क्षेत्र में ऐतिहासिक कीर्तिमान बनाने के साथ शुरु हुआ. भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के विज्ञानियों ने एक साथ 104 उपग्रहों का प्रक्षेपण कर एक नया कीर्तिमान रच दिया है. जिसको शायद भारत ही तोडेगा. इस उपलब्धि हेतु जितनी भी प्रशंसा की जाए कम है. इस उपलब्धि को यादगार बनाने के लिए हम 'वैज्ञानिक' का यह अंक 'अंतरिक्ष विज्ञान विशेषांक' के रूप से प्रकाशित कर रहे हैं, जिसमें प्राचीन भारतीय विज्ञान पर भी प्रकाश डाला गया है.

यूं तो विज्ञान की खोज और अनुसंधान का दायरा असीमित है. लेकिन हाल के महीनों में वैज्ञानिकों ने स्वास्थ्य, सौर जगत, भूगर्भ और जीव विज्ञान आदि के क्षेत्र में भी कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल की हैं. सौर मंडल पर नजर रखते हुए वैज्ञानिकों ने सौर मंडल के निर्माण के रहस्य की खोज का दायरा बढ़ाते हुए सौर निर्माण प्रक्रिया में बेरिलियम-10 नामक पदार्थ की उपस्थिति का वैज्ञानिक प्रमाण दिया है. जो यह पुष्टि करता है कि सौरमंडल का निर्माण एक अधिवतारक विस्फोट द्वारा ही हुआ था.

उधर रासायनिक प्रयोगों से यह पता चला है कि हीलियम के स्थाई यौगिक निर्मित किए जा सकते हैं. विदित हो कि हीलियम, हाइड्रोजन के बाद बह्माण्ड में सर्वाधिक बहुलता से पाया जानेवाला तत्व है. अब वैज्ञानिकों ने एक स्थाई हीलियम-सोडियम यौगिक जैसा लगनेवाले एक पदार्थ को निर्मित करने की घोषणा कर आधुनिक रसायन विज्ञान की सर्वाधिक आधारभूत मान्यताओं को चुनौती दी है. इसके अनुसार कम से कम दो सोडियम हीलियम से बने यौगिको का निर्माण संभव है.

वहीं चिकित्सा के क्षेत्र में लाइलाज रोगों से निदान के लिए चिकित्सा विज्ञानी लगातार शोध कर रहे हैं. खासकर यह कैंसर जैसे रोगों के लिये है. इन शोधों से पता चला है कि कैंसर के करीब दो तिहाई मामले कोशिकाओं के विभाजन की प्रक्रिया के दौरान डीएनए कॉपिंग में होनेवाली आकस्मिक गड़बड़ियां हैं. जबकि कैंसर के 29 प्रतिशत मामले पर्यावरणीय देन हैं. सिर्फ पांच प्रतिशत मामलों में कैंसर का कारण आनुवांशिक पाया गया है. वैज्ञानिकों ने अध्ययन के दौरान 32 प्रकार के कैंसरों की जिनोम श्रृंखला और इपिडेमिलॉजिक गणनाओं का गणितीय विश्लेषण किया और पाया कि कैंसर के 66 प्रतिशत मामले ऐसे हैं, जिनसे बचा नहीं जा सकता क्योंकि ये मामले डीएनए कॉपिंग में अचानक हुई गलतियों के कारण होते हैं. इससे यह जानने में सफलता मिली कि अधिकांश कैंसर रोग के लिए डीएनए की यह गड़बड़ी जिम्मेदार है.

कर्नाटक पशु और मत्स्य विज्ञान विश्वविद्यालय ने जानवरों के लिए टूटे हुए टायरों और रबड़ से जानवरों के लिए स्मार्ट जूते बना डाले हैं. मिशिगन विश्वविद्यालय के अन्वेषक मानव स्टेम कोशिकाओं को मूषक में प्रत्यारोपित कर 8 सप्ताह में कृत्रिम फेंफड़ा निर्मित करने में सफल हो गए हैं. इस अनुसंधान ने मानव श्वसन रोग अध्ययन के क्षेत्र में नए द्वार खोल दिए हैं.

यह दुखद है कि विज्ञान के क्षेत्र में नित नए आविष्कार हो रहे हैं पर समाचार माध्यमों में इन्हें उचित स्थान नहीं मिल पा रहा, जितना उल्टे सीधे समाचारों को या आभासी विज्ञान को मिल रहा है. इस नव संचार क्रांति के दौर में मूल विज्ञान अनुसंधान के तत्व पीछे छूट रहे हैं. हालांकि आज जो भी इलेक्ट्रॉनिक, डिजीटल या आभासी विश्व विकसित हो रहा है उसका आधार मूल विज्ञान ही है. इसलिए 'वैज्ञानिक' जैसी पत्रिकाओं की जिम्मेदारी विज्ञान के प्रचार प्रसार के लिए बढ़ जाती है.

'वैज्ञानिक' के इस अंक में हमने अंतरिक्ष विज्ञान से संबंधित जानकारियों के साथ साथ 'पर्यावरण व जलप्रदूषण से बचने के उपाय', 'दूध में रसायनों का खतरा', 'पीड़कनाशी रसायन और मृदा प्रदूषण' व 'बौद्धिक संपदा अधिकार' की जानकारी के अलावा नियमित स्तम्भों को समाहित किया है. वैज्ञानिक का प्रकाशन सही समय पर हो इसलिए पूरी टीम को सक्रिय किया जा चुका है.

हमें प्रसनन्ता हो रही है कि हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद का यह स्वर्ण जयंती वर्ष है. इस उपलब्धि को यादगार बनाने के लिए हमने परिषद का नया प्रतीक चिन्ह बनाया है. साथ ही 'वैज्ञानिक' को आइएसएसएन नंबर भी प्राप्त हो गया है. स्वर्ण जयंती वर्ष के अवसर पर वैज्ञानिक संपादकीय मंडल आप सभी पाठकों, शुभचिंतकों, लेखकों, सहयोगियों और सभी सदस्यों का हार्दिक अभिनंदन करती है और आशा करती है कि आपका सहयोग सदैव मिलता रहेगा. आधुनिक विज्ञान के साथ साथ हमें भारत के प्राचीन विज्ञान और विज्ञानियों पर भी आपके लेख मिलते रहेगें ऐसी मेरी आशा है.

- विपुल सेन
मुख्य संपादक

भारतीय अंतरिक्ष विज्ञान के पुरोधा

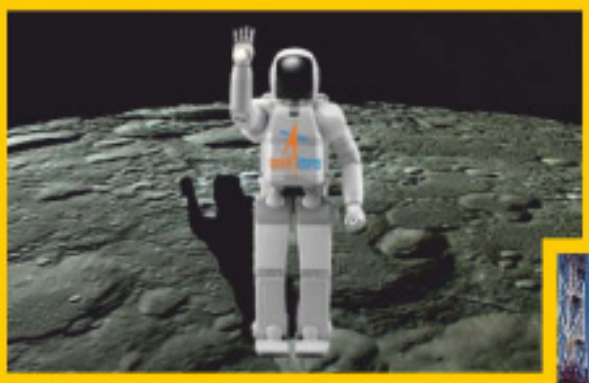

इसरो की चांद पर मानव भेजने की योजना

इसरो का प्रक्षेपण यान
अंतरिक्ष की उड़ान

डॉ विक्रम अंबालाल साराभाई, इसरो के संस्थापक

कल्पना चावला

भारतीय मूल की
प्रथम अंतरिक्ष महिला

राकेश शर्मा

प्रथम भारतीय अंतरिक्ष यात्री

इसरो की स्पेस शटल परियोजना

इसरो का नियंत्रण कक्ष

चलो चूम ले आकाश

अनंत है अंतरिक्ष अभियान-इसरो

विपुल सेन 'लखनवी'

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान (इसरो) ने 15 फरवरी 2017 को एक साथ 104 उपग्रहों को अंतरिक्ष में भेजकर नया इतिहास रचा है.

एक अंतरिक्ष अभियान में इससे पहले इतने उपग्रह एक साथ कभी नहीं छोड़े गए हैं. इसरो का अपना रिकॉर्ड एक अभियान में 20 उपग्रहों को प्रक्षेपित करने का रहा है. इसरो ने ये कारनामा 2016 में किया था. (इससे पहले अब तक किसी एक अभियान में सबसे ज्यादा उपग्रह भेजने का विश्व रिकॉर्ड रूस के नाम था, जिसने 2014 में एक अभियान में 37 उपग्रहों को भेजने का काम किया था.) इस अभियान के बारे में जानकारी देते हुए, इसरो के निदेशक ए.एस. किरण कुमार ने मीडिया से कहा, 'इनमें से एक उपग्रह का वजन 730 कि.ग्रा. है, जबकि बाकि के दो का वजन 19-19 कि.ग्रा. है. इनके अलावा हमारे पास 600 कि.ग्रा. और वजन भेजने की क्षमता थी, इसलिए हमने 101 दूसरे उपग्रहों को भी भेजने का फ़ैसला किया है.' जिन देशों के उपग्रहों को इसरो ने अंतरिक्ष में भेजा है, उनमें अमरीका और इसराइली उपग्रह भी शामिल हैं, जो ये बता रहे हैं कि उपग्रह प्रक्षेपण के बाज़ार में भारत बड़ी तेजी से अपनी जगह बना रहा है.

दरअसल पिछले कुछ सालों में भारत अंतरिक्ष प्रक्षेपण के बाज़ार में भरोसेमंद खिलाड़ी बनकर उभरा है. बीते कुछ

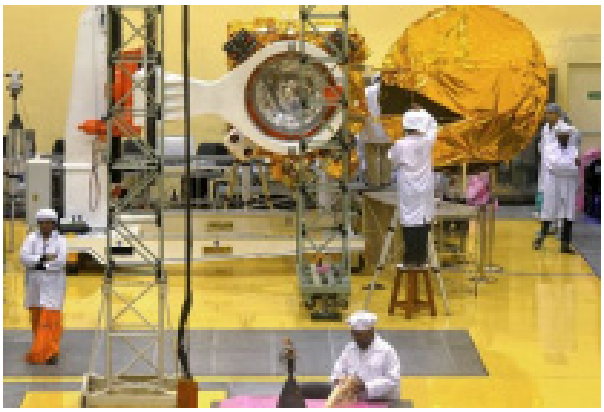

सालों में भारत ने दुनिया के 21 देशों के 79 उपग्रहों को अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किया है, जिसमें गूगल और एयरबस जैसी बड़ी कंपनियों के उपग्रह शामिल हैं मौजूदा स्थिति में भारत में हर साल में पांच उपग्रह अभियान अंतरिक्ष में भेज सकता है जबकि चीन की क्षमता 20 उपग्रह भेजने की है. बावजूद इस अंतर के अंतरिक्ष बाज़ार में भारत और चीन की

इसरो के वर्तमान अध्यक्ष ए.एस.किरण कुमार

होड़ को जानकार उसी तरह से देख रहे हैं जिस तरह की होड़ कभी अमरीका और सोवियत रूस में हुआ करती थी.

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) भारत का राष्ट्रीय अंतरिक्ष संस्थान है, जिसका मुख्यालय बंगलुरु (कर्नाटक) में है. संस्थान में लगभग 17,000 कर्मचारी एवं वैज्ञानिक कार्यरत हैं. संस्थान का मुख्य कार्य भारत के लिये अंतरिक्ष संबधी तकनीक उपलब्ध करवाना है. अंतरिक्ष कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों में उपग्रहों, प्रमोचक यानों, परिज्ञापी राकेटों और भू-प्रणालियों का विकास शामिल है.

1969 में स्थापित इसरो को अंतरिक्ष अनुसंधान के लिए तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय समिति (INCOSPAR) द्वारा स्वतंत्र

भारत के वैज्ञानिक विक्रम साराभाई के प्रयासों से 1962 में स्थापित किया गया. इसरो के वर्तमान निदेशक ए.एस. किरण कुमार हैं. आज भारत न सिर्फ अपनी अंतरिक्ष संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम है बल्कि दुनिया के बहुत से देशों को अपनी अंतरिक्ष क्षमता से व्यवसायिक और अन्य स्तरों पर सहयोग कर रहा है.

भारत का पहला उपग्रह, आर्यभट्ट, जो 19 अप्रैल 1975 में सोवियत संघ द्वारा प्रमोचित किया गया था जिसे गणितज्ञ आर्यभट्ट के नाम पर बनाया गया था. 1980 में रोहिणी उपग्रह पहला भारत-निर्मित प्रक्षेपण यान एसएलवी -3 बन गया जिसे कक्षा में स्थापित किया गया. इसरो ने बाद में दो अन्य रॉकेट विकसित किये, ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान ग्रहों हेतु ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान (पी.एस.एल.वी.), भूस्थिर कक्षा में उपग्रहों को रखने के लिए ध्रुवीय कक्षाओं और भूस्थिर उपग्रह प्रक्षेपण यान (जी.एस.एल.वी.) इस रॉकेट के जरिए कई संचार उपग्रहों और पृथ्वी अवलोकन गणन और सैटेलाइट नेविगेशन सिस्टम तैनात किया.

इसरो ने 22 अक्टूबर 2008 को चंद्रमा की परिक्रमा हेतु चंद्रयान-1 भेजा, मंगल ग्रह की परिक्रमा हेतु 24 सितंबर 2014 को मंगल आर्बिटर भेजा जो सफलतापूर्वक मंगल ग्रह की कक्षा में प्रवेश कर पहले ही प्रयास में सफलता प्राप्त करने में भारत पहला राष्ट्र बना.

भविष्य की योजनाओं में शामिल जीएसएलवी एमके III के विकास (भारी उपग्रहों के प्रक्षेपण के लिए) ULV, एक पुनः प्रयोज्य प्रक्षेपण यान, मानव अंतरिक्ष यात्रा, आगे चंद्र अन्वेषण, ग्रहों के बीच जांच, एक सौर मिशन अंतरिक्ष यान के विकास आदि शामिल है.

इसरो को शांति, निरस्त्रीकरण और विकास के लिए साल 2014 में इंदिरा गांधी पुरस्कार से सम्मानित किया गया.

इसरो की कुछ जानकारियां

इसरो का पूरा नाम क्या है?

इसरो का पूरा नाम है भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन.

भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम का 'संस्थापक जनक' किसे माना जाता है?

डॉ.विक्रम ए. साराभाई को भारत में अंतरिक्ष कार्यक्रमों का संस्थापक जनक माना जाता है.

इसरो का गठन कब हुआ?

इसरो का गठन 15 अगस्त, 1969 को हुआ था.

अंतरिक्ष विभाग का गठन कब हुआ था?

अंतरिक्ष विभाग (अं.वि.) और अंतरिक्ष आयोग को सन् 1972 में गठित किया गया. 01 जून, 1972 में इसरो को अंतरिक्ष विभाग के अंदर शामिल किया गया.

इसरो का प्रमुख उद्देश्य क्या है?

इसरो का प्रमुख उद्देश्य अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का विकास तथा विभिन्न राष्ट्रीय आवश्यकताओं में उनका उपयोग करना है.

इन उद्देश्यों की पूर्ति कैसे की जाती है?

इसरो ने दो प्रमुख अंतरिक्ष प्रणालियों की स्थापना की है, संचार, दूरदर्शन प्रसारण तथा मौसम-विज्ञान सेवाओं के लिए इन्सैट, और संसाधन मॉनिटरिंग और प्रबंधन के लिए भारतीय सुदूर संवेदन उपग्रह (आई.आर.एस.) प्रणाली. इसरो ने अभीष्ट कक्ष में इन्सैट और आई.आर.एस. की स्थापना के लिए दो उपग्रह प्रमोचन यान, पी.एस.एल.वी. और जी.एस.एल.वी. विकसित किए हैं.

उपग्रह कहाँ बनाए जाते हैं?

उपग्रहों को इसरो उपग्रह केंद्र (विशाखापटनम) में बनाया जाता हैं.

रॉकेट/प्रमोचन यान कहाँ बनाए जाते हैं?

रॉकेट/ प्रमोचन यान विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र (वी.एस.एस.सी.), तिरुवनंतपुरम में बनाए जाते हैं.

राकेटों का प्रमोचन कहाँ से किया जाता है?

इसरो की प्रमोचन सुविधा एस.डी.एस.सी. शार में स्थित है, जहाँ से प्रमोचन यानों और परिज्ञापी रॉकेटों का प्रमोचन किया जाता है. तिरुवनंतपुरम स्थित टर्ल्स से भी परिज्ञापी रॉकेटों का प्रमोचन किया जाता है.

किस प्रकार उपग्रह आँकड़ों का आदेश दिया जा सकता है?

आप राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केंद्र (एन.आर.एस.सी.), हैदराबाद से आँकड़े प्राप्त कर सकते हैं. : अधिक जानकारी के लिए वेबसाइटः www.nrsc.gov.in देखें.

भारत में अंतरिक्ष कार्यक्रम का प्रारंभ कहां हुआ?

भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम का प्रारंभ तिरुवनंतपुरम के निकट Indian space Rescacal organised प्रमोचन केंद्र (टर्ल्स) में हुआ.

रॉकेट प्रमोचन केंद्र के रूप में थुम्बा का चुनाव क्यों किया गया?

पृथ्वी की भू-चुंबकीय भूमध्यरेखा थुम्बा से हो कर गुज़रती है.

परिज्ञापी रॉकेट क्या है?

परिज्ञापी का तात्पर्य, ऊपरी वायुमंडल के भौतिक प्राचलों के मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त रॉकेट है.

भारतीय परिज्ञापी रॉकेटों पर अक्षर 'RH' और अंक क्या सूचित करते हैं?

RH परिज्ञापी रॉकेट 'रोहिणी' का द्योतक है और अगले अंक रॉकेट के व्यास को सूचित करते हैं.

पहला रॉकेट कब प्रमोचित किया गया? यह रॉकेट कौन-सा था?

पहला रॉकेट, नैकी-अपाची, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से प्राप्त किया गया था, जिसे 21 नवंबर, 1963 को प्रमोचित किया गया.

भारत में रॉकेट निर्माण कब से प्रारंभ हुआ?

भारत का पहला स्वदेशी परिज्ञापी रॉकेट, आरएच-75, 20 नवंबर, 1967 में प्रमोचित किया गया.

वी.एस.एस.सी. का विस्तार क्या है और यह कब गठित हुआ?

अंतरिक्ष विज्ञान और प्रौद्योगिकी केंद्र (एस.एस.टी.सी.) का पुनर्नामकरण डॉ.विक्रम साराभाई के सम्मान में विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र (वी.एस.एस.सी.) के रूप में किया गया. डॉ. विक्रम साराभाई का 30 दिसंबर, 1971 को असामयिक निधन हो गया था.

इसरो के कितने केंद्र हैं?

देश भर में इसरो के छह प्रमुख केंद्र तथा कई अन्य इकाइयाँ, एजेंसियां, सेवाएँ और प्रयोगशालाएँ स्थापित हैं.

ये केंद्र कहाँ पर स्थित हैं?

विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र (वी.एस.एस.सी.) तिरुवनंतपुरम में; इसरो उपग्रह केंद्र (आई.एस.ए.सी.) बंगलुरु में; सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र (एस.डी.एस.सी.-शार) श्रीहरिकोटा में; द्रव नोदन प्रणाली केंद्र (एल.पी.एस.सी.) तिरुवनंतपुरम, बंगलुरु और महेंद्रगिरी में, अंतरिक्ष उपयोग केंद्र (सैक), अहमदाबाद में और राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केंद्र (एन.आर.एस.सी.), हैदराबाद में स्थित हैं.

इन केंद्रों के प्रमुख कार्य क्या हैं?

वी.एस.एस.सी., तिरुवनंतपुरम में प्रमोचन यान का निर्माण किया जाता है; आइजैक, बंगलुरु में उपग्रहों को अभिकल्पित और विकसित किया जाता है; एस.डी.एस.सी., श्रीहरिकोटा में उपग्रहों और प्रमोचन यानों का एकीकरण और प्रमोचन किया जाता है; एल.पी.एस.सी. में निम्नतापीय चरण सहित द्रव चरणों का विकास किया जाता है, सैक, अहमदाबाद में संचार और सुदूर संवेदन उपग्रहों के लिए संवेदकों तथा अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के उपयोग संवंधित का कार्य किए जाते हैं तथा; एन.आर.एस.सी., हैदराबाद द्वारा सुदूर संवेदन आँकड़ा अभिग्रहण, संसाधन और वितरण का कार्य सँभाला जाता है.

भारत का पहला प्रमोचन यान कौन सा था?

भारत का पहला प्रमोचन यान का नाम उपग्रह प्रमोचन यान-3 (एसएलवी-3) था.

इसका प्रमोचन कब हुआ?

एस.एल.वी.-3 का प्रथम सफल प्रमोचन एस.डी.एस.सी., शार, श्रीहरिकोटा से 18 जुलाई, 1980 को संपन्न हुआ.

भारत द्वारा विकसित अन्य प्रमोचन यान कौन से हैं?

एस.एल.वी.-3 के अलावा, भारत ने संवर्धित उपग्रह प्रमोचन यान (ए.एस.एल.वी.), ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचन यान (पी.एस.एल.वी.) और भू-तुल्यकाली उपग्रह प्रमोचन यान (जी.एस.एल.वी.) का विकास किया.

उपग्रहों का मौटे तौर पर कैसे वर्गीकरण किया जाता है?

उपग्रहों को मोटे तौर पर दो वर्गो में वर्गीकृत किया जाता है, यथा संचार उपग्रह और सुदूर संवेदन उपग्रह.

संचार उपग्रह क्या हैं?

संचार उपग्रह आम तौर पर संचार, दूरदर्शन प्रसारण, मौसम-विज्ञान, आपदा चेतावनी आदि की ज़रूरतों के लिए भू-तुल्यकाली कक्षा में कार्य करते हैं.

सुदूर संवेदन उपग्रह क्या है?

सुदूर संवेदन उपग्रह प्राकृतिक संसाधन मॉनिटरिंग और प्रबंधन के लिए अभिप्रेत है और यह सूर्य-तुल्यकाली ध्रुवीय कक्षा (एस.एस.पी.ओ.) से परिचालित होता है.

एनएनआरएमएस क्या है?

एन.एन.आर.एम.एस. राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन प्रणाली के लिए परिवर्णी शब्द है. एन.एन.आर.एम.एस. एकीकृत संसाधन प्रबंधन प्रणाली है जिसका लक्ष्य परंपरागत प्रौद्योगिकी के साथ सुदूर संवेदन आंकड़ों के प्रयोग द्वारा देश के प्राकृतिक संसाधनों का इष्टतम उपयोग तथा उपलब्ध संसाधनों का सुव्यवस्थित सूचीकरण करना है.

भारतीय भूमि से भारत द्वारा प्रमोचित सर्वाधिक भारी उपग्रह कौन सा है?

दिनांक 2 सितंबर, 2007 को जी.एस.एल.वी.-एफ़ 04 द्वारा प्रमोचित 2130 कि.ग्रा. भार वाला उपग्रह इन्सैट-4सी.आर. भारत द्वारा प्रमोचित सर्वाधिक भारी उपग्रह है.

भारत का पहला प्रचालित प्रमोचक रॉकेट कौन-सा है?

पी.एस.एल.वी. भारत का पहला प्रचालित प्रमोचक राकेट है. अब तक इसकी तीन विकासात्मक उड़ानें और आठ कार्यकारी उड़ानें संपन्न हुई हैं.

चंद्रयान-1 क्या है?

चंद्रयान-1 अंतरिक्ष-यान द्वारा-चंद्रमा का वैज्ञानिक अन्वेषण है. भारतीय भाषाओं (संस्कृत और हिन्दी) में- चंद्रयान का तात्पर्य है 'चंद्र अर्थात चंद्रमा, यान अर्थात वाहन' अर्थात, चंद्रमा अंतरिक्ष-यान. चंद्रयान-1 प्रथम भारतीय ग्रहीय विज्ञान

और अन्वेषण मिशन है.

चंद्रयान-1 कब और कहाँ से प्रमोचित किया गया?

चंद्रयान-1, श्रीहरिकोटा (शार), भारत में स्थित सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से 22 अक्तूबर, 2008 को प्रमोचित किया गया.

चंद्रयान-1 कब तक प्रचालन में रहा?

चंद्रयान-1 28 अगस्त 2009 तक 312 दिनों के लिए प्रचालन में रहा.

चंद्रयान के वैज्ञानिक उद्देश्य क्या था ?

चंद्रयान-1 मिशन का उद्देश्य दृश्य, निकट अवरक्त, न्यून ऊर्जा एक्स-किरण और उच्च ऊर्जा एक्स-किरण क्षेत्रों में चंद्रमा की सतह का उच्च विभेदन सुदूर संवेदन करना है. इसके विशेष वैज्ञानिक लक्ष्य हैं : चंद्रमा के निकटस्थ और दूरस्थ (5-10 मी. उच्च स्थानिक और तुंगता विभेदन सहित) दोनों ओर के त्रि-आयामी एटलस तैयार करना. मैगनेशियम, एल्यूमीनियम, सिलिकॉन, कैल्शियम, आयरन तथा टाइटेनियम जैसे खनिजों और रासायनिक तत्वों तथा उच्च परमाणु संख्या के रेडॉन, यूरेनियम और थोरियम जैसे उच्च स्थानिक विभेदन वाले तत्वों का चंद्रमा की संपूर्ण सतह पर उपस्थिति का रासायनिक और खनिजीय मानचित्रण करना. हम समकालिक प्रकाशीय भूवैज्ञानिक और रासायनिक मानचित्रण से विभिन्न भूवैज्ञानिक इकाइयों की पहचान और चंद्रमा के उद्भव व प्रारंभिक विकास के इतिहास से संबंधित परिकल्पना की जांच करने में समर्थ होंगे जिससे चंद्रमा की सतह की प्रकृति को समझने करने में मदद मिलेगी.

चंद्रयान-1 पर कौन से वैज्ञानिक उपकरण लगे थे?

अंतरिक्ष यान चंद्रयान-1 पर ग्यारह वैज्ञानिक उपकरण लगे थे. इनमें पाँच भारतीय और छह विदेशी ई.एस.ए. के तीन, नासा के दो तथा बुलगेरियाई विज्ञान अकादमी का एक वैज्ञानिक उपकरण शामिल हैं. इनका चयन इसरो के अवसर की घोषणा (एओ) के माध्यम से किया गया. दो ई.एस.ए. उपकरणों में भारतीय सहयोग शामिल है.

चंद्रमा का तापमान कितना है?

चंद्रमा पर तापमान चरम सीमाओं पर पहुँच जाता है - सूरज की रोशनी में प्रकाशित चंद्रमा का पहलू लगभग 130° सेलसियस तक झुलसाने जितना गरम हो जाता है, और रात में यही पहलू -180° सेलसियस पर अत्यधिक ठंडा हो जाता है.

क्या चंद्रमा पर जीवन है?

अभी तक किसी भी चंद्र मिशन ने चंद्रमा पर जीवन की उपस्थिति का कोई संकेत नहीं दिया है.

हम चंद्रमा का केवल एक पहलू ही क्यों देख पाते हैं?

परिक्रमा करते हुए चंद्रमा पृथ्वी को हमेशा अपना एक पहलू ही दर्शाता है. यह इसलिए है क्योंकि पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण ने चंद्रमा के नियमित प्रचक्रण की गति इतनी कम कर दी कि वह उसके पृथ्वी की परिक्रमा के समय के अनुरुप हो गई. अतः चंद्रमा को पृथ्वी के चारों ओर घूमने में उतना ही समय लगता है जितना कि उसे अपने अक्ष पर घूमने में लगता है.

चंद्रयान-1 मिशन को साकार करने का कुल बजट कितना था ?

प्रस्तावित भारतीय चंद्रमा मिशन चंद्रयान-1 को साकार करने के लिए लागत 386 करोड़ रुपए (लगभग $76 मिलियन) था. इसमें नीतभार विकास के लिए 53 करोड़ रुपए (लगभग $11 मिलियन), अंतरिक्षयान बस के लिए 83.00 करोड़ रुपए (लगभग $17 मिलियन), गहन अंतरिक्ष नेटवर्क की स्थापना के लिए 100 करोड़ रुपए ($20 मिलियन), पी.एस.एल.वी.प्रमोचन यान के लिए 100 करोड़ रुपए ($20 मिलियन) और वैज्ञानिक डेटा केंद्र के लिए 50 करोड़ रुपए ($10 मिलियन), बाह्य नेटवर्क समर्थन और कार्यक्रम प्रबंधन व्यय शामिल था.

एंट्रिक्स क्या है?

एंट्रिक्स इसरो का वाणिज्यिक स्कंध है. यह विश्व भर में भारतीय अंतरिक्ष उत्पाद और सेवा क्षमताओं के विपणन हेतु एकल खिड़की एजेंसी है.

मंगलयान क्या है (मार्स ऑर्बिटर मिशन यानि MOM)

22 सितम्बर, 2014 को भारत ने वो कर दिखाया, जो न अमेरिका कर सका, न चीन और न कोई अन्य विकसित देश. जी हां भारत का मंगलयान 67 करोड़ किलोमीटर का सफर पूरा कर पहली ही कोशिश में सीधे मंगल ग्रह की कक्षा में जा पहुंचा. दुनिया के तमाम देशों ने मंगल के करीब पहुंचने के लिए अब तक 51 मिशन छोड़े हैं. इनमें से कामयाब हुए सिर्फ 21, लेकिन पहली ही कोशिश में कामयाबी मिली सिर्फ भारत को और मंगल पर पहुंच गया मार्स ऑर्बिटर मिशन यानी MOM.

उस दिन की सुबह 7 बजकर 31 मिनट पर मंगलयान के 440 न्यूटन लिक्विड एपोजी मोटर (LAM) यान को मंगल की कक्षा में ले जाने के लिए चालू किया गया. लक्ष्य था कि यान की पहले की रफ्तार जो 22.57 किमी/ सेकेंड थी, वो कम करके 4.6 किमी./सेकेंड तक ले आई जाए. मंगल यान का इंजन चालू करने के बाद सस्पेंस के करीब 30 मिनट बहुत भारी थे. कुछ भी हो सकता था. अगले चंद मिनट पर टिकी थी सफलता या असफलता. यान मंगल के पीछे जा चुका था. ये बहुत पेचीदा ऑपरेशन था, क्योंकि ये सावधानी

रखनी थी कि यान इतना धीमा न हो जाए कि मंगल की सतह से टकरा जाए और इसकी रफ्तार इतनी भी तेज न हो कि वह मंगल के गुरुत्वाकर्षण से बाहर अंतरिक्ष में खो जाए.

इस बीच मंगलयान-मंगल की छाया में यानी उसके पीछे जा चुका था. मंगल की वजह से यान का रेडियो लिंक भी खत्म हो गया. इसी दौरान यान का फॉरवर्ड रोटेशन शुरू हो गया. थोड़ी देर बाद यान के मीडियम गेन एंटीना से संपर्क हुआ. करीब 8 बजकर 2 मिनट पर ये संकेत मिलने शुरू हो गए कि मिशन कामयाब हो गया है. इसके साथ ही इसरो के केंद्र से लेकर देश के कोने-कोने तक खुशी की लहर दौड़ गई.

भारत ने लिक्विड मोटर इंजन की तकनीक से मंगलयान को मंगल की कक्षा में स्थापित किया. आमतौर पर चांद तक पहुंचने के लिए इसी तकनीक का इस्तेमाल किया जाता है, लेकिन इतने लंबे मिशन पर भारत से पहले किसी भी देश ने लिक्विड मोटर इंजन के इस्तेमाल का जोखिम नहीं उठाया था. मंगल यान को 5 नवंबर 2013 को सतीश धवन स्पेस सेंटर, श्रीरिकोटा (आंध्र प्रदेश) से प्रक्षेपित किया गया था.

अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा के मावेन मिशन के मंगल की कक्षा में पहुंचने के ठीक 48 घंटे बाद भारत के मंगलयान ने लाल ग्रह की कक्षा में प्रवेश करने में सफलता पाई. मंगलयान पर सिर्फ 450 करोड़ रुपए खर्च हुए हैं, यानि

अंतरिक्ष विज्ञान के पुरोधा वराह मिहिर

वर्तमान समय की बात करें तो आज देश दुनिया के वैज्ञानिकों की नजर मंगल ग्रह पर लगी हुई है. अमेरिका के नासा और भारतीय संस्थान इसरो सहित कई और देशों के वैज्ञानिक संस्थान मंगल ग्रह पर पानी और जीवन की संभावना को लगातार खोज रहे हैं, लेकिन आज हम आपको एक ऐसे भारतीय वैज्ञानिक के बारे में बता रहे हैं जिसने आज से 1500 साल पहले ही मंगल पर पानी की खोज कर ली थी. इस भारतीय वैज्ञानिक का नाम था वराह मिहिर.

उज्जैन के कथिपा गांव में 499 ई. में वराह मिहिर का जन्म हुआ था. इनके पिता का नाम आदित्य दास था, जो कि सूर्य उपासक थे. वराह मिहिर ने अपने जीवनकाल में ज्योतिष और गणित पर लंबा शोध किया. इन्होंने समय मापक घटयंत्र, लौह स्तंभ और वेधशाला का निर्माण अपने जीवनकाल में कराया. इन्होंने अपने-अपने शोध कार्य को सिद्धांत के रूप में 'सूर्य सिद्धांत' नामक ग्रंथ में लिखा जो कि अब उपलब्ध नहीं है.

सूर्य सिद्धांत नामक ग्रंथ को वराह मिहिर ने 1518 साल पहले लिखा था. अपने इस ग्रंथ में उन्होंने मंगल के अर्धव्यास का वर्णन किया था, जिसकी गणना नासा और इसरो की गणनाओं से काफ़ी मिलती जुलती है. अपने ग्रन्थ में वराह मिहिर ने उस समय ही मंगल पर लोहे और पानी के होने की बात लिख दी थी. आज के समय की बात करें तो 2004 में नासा ने रोवर सैटेलाइट के द्वारा मंगल के उत्तरी ध्रुव पर ठोस रूप में लोहे और पानी के बारे में पता लगाया था. इससे वराह मिहिर के ग्रन्थ की बातें स्वयं ही सत्यापित होती हैं. वराह मिहिर दूसरी ओर लिखते हैं कि हमारे सौर मंडल के सभी ग्रहों की उत्पत्ति सूर्य से हुई है और मंगल भी सूर्य की संवर्धन किरण से जन्मा है. इस बात को भी आधुनिक वैज्ञानिक मानते हैं और सूर्य से ही सौर मंडल के सभी ग्रहों की उत्पत्ति को स्वीकारते हैं.

टैक्सी से भी कम किराया प्रति किलोमीटर, जो नासा के मावेन मिशन के खर्च का 10वां हिस्सा ही है. मंगलयान ने कई और मामलों में भी सफलता के नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं.

भारतीय स्पेस एजेंसी इसरो का मंगलयान मार्स ऑर्बिटर मिशन यानी MOM मंगल ग्रह की अंडाकार कक्षा में कामयाबी के साथ स्थापित हो गया है. ये भारत के स्पेस रिसर्च के इतिहास की कालजयी घटना है. इसरो ने इस सफलता से ऐसा इतिहास रचा है, जिसका कोई सानी नहीं है. मंगल मिशन कई मामले में समूची दुनिया के लिए उदाहरण बन गया.

अब तक एशिया में भी कोई भी देश, कोई भी देश का मतलब है चीन और जापान भी कोशिश करने के बावजूद मंगल अभियान में सफलता नहीं पा सके हैं. चीन का पहला मंगल मिशन यंगहाउ-1, 2011 में असफल हो गया था. 1998 में जापान का मंगल अभियान ईंधन ख़त्म होने के कारण नाकाम हो गया. मंगल तक पहुंचने की अमेरिका की भी पहली 6 कोशिशें नाकाम हो गईं थीं. तमाम कोशिशों के बाद दुनिया में सिर्फ अमेरिका, रूस और यूरोपीय यूनियन ने अब तक मंगल पर कामयाब मिशन भेजे हैं. यानि भारत दुनिया का चौथा मुल्क है जिसका झंडा मंगल पर शान से फहरा रहा है.

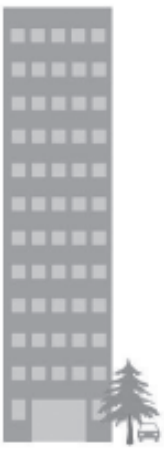

इसरो में लगा रडार

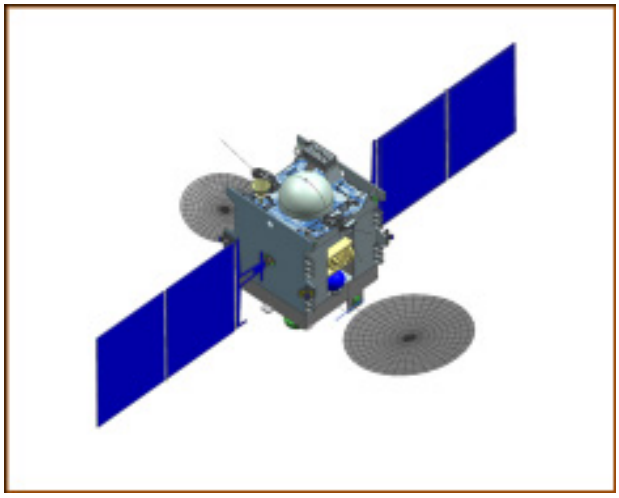

मंगलयान

चित्र : प्रमोचकयान

ये समूचे हिंदुस्तान के लिए गर्व का विषय है. हिंदुस्तान की इस कामयाबी को दुनिया सलाम कर रही है. अमरीकी स्पेस एजेंसी नासा ने ट्विटर पर भारतीय वैज्ञानिकों को बधाई देते हुए लिखा- 'मंगल पर पहुंचने के लिए इसरो को बधाई. मंगलयान लाल ग्रह के बारे में जानकारी हासिल करने वाले अभियान से जुड़ गया है'

चीन ने कहा- 'ये भारत के लिए गर्व की बात है और एशिया के लिए भी गर्व की बात है और अंतरिक्ष में खोज के नजरिए से मानवता के लिए मील का पत्थर है. इसके लिए हम भारत को बधाई देते हैं.'

इस यादगार दिन के गवाह देश के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भी बने. वो वैज्ञानिकों का हौसला बढ़ाने के लिए इसरो सेंटर में मौजूद थे.

(सभी चित्र व कथन गूगल, इसरो व अन्य वेबसाइटों से संकलित हैं)

(संप्रति संपादक-वैज्ञानिक)
सम्पर्क : **भाभा परमाणु अनुसन्धान केंद्र, ट्रॉम्बे, मुंबई- 400 085**

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में प्रथम पुरस्कार प्राप्त लेख

जैव-रासायनिक प्रक्रियाएं और नैनो-प्रौद्योगिकी

- मणि प्रभा

आनुवांशिकता की गुत्थी को सुलझाना जैव-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण सफलता है. विगत 200 वर्षों में विज्ञान जगत में आई असाधारण प्रगति के कारण अनुवांशिकता की प्रक्रिया को बेहतर ढंग से समझा जा सका है. जीनोमिकी आनुवांशिकी का वह क्षेत्र है जिसमें हम जीवों के सम्पूर्ण जीनोम का अध्ययन करते हैं. इसमें जीवों के सम्पूर्ण डी.एन.ए. अनुक्रम और आनुवांशिक मानचित्रण करने का प्रयास किया जाता है. जीनोमिकी के अन्तर्गत किसी कोशिका या ऊतक के सभी जीन का अध्ययन डी.एन.ए., आर.एन.ए. और प्रोटीन-स्तर पर होता है. मानव जीनोम अनुक्रमण के साथ कई अन्य जीवों के जीनोम का भी अनुक्रमण किया जा चुका है और कुछ अन्य प्राणियों के सन्दर्भ में यह काम अभी जारी है जिनसे विविध जीनों के प्रकार्य को समझने में सहायता मिलेगी.

जीनोमिकी विज्ञान की वह शाखा है जिसमें प्राणियों के समग्र डी.एन.ए. अनुक्रमण का अध्ययन किया जाता है एवं उसकी उपयोगिता को प्राथमिकता दी जाती है. जीनोमिकी के क्षेत्र में निरन्तर हो रही प्रगति को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा रहा है कि जीनोमिक्स से प्राप्त सूचना नये लक्ष्यों की खोज करने तथा नई औषधियों को तैयार करने में काफी उपयोगी सिद्ध होगी.

जीनोमिक औषधियों द्वारा व्यक्तिगत स्तर पर मरीज की जीनोमिक जानकारियों के उपयोग से इलाज करना, बेहतर स्वास्थ्य लाभ का एक शक्तिशाली तरीका है. जीनोमिकी आनुवांशिकी का वह क्षेत्र है जिसमें हम जीवों के सम्पूर्ण जीनोम का अध्ययन करते हैं. इसमें जीवों के सम्पूर्ण डी.एन.ए. अनुक्रम और आनुवांशिक मानचित्रण करने का प्रयास किया जाता है. किसी भी प्रकार के आण्विक जीव विज्ञान, आनुवांशिकी या जैविक और चिकित्सकीय अनुसंधान की प्राथमिकता, जीन के कार्य और उसकी भूमिकाओं का विश्लेषण करना ही होता है. जीनोमिकी के अन्तर्गत किसी कोशिका या ऊतक के सभी जीन का अध्ययन डी.एन.ए., आर.एन.ए. और प्रोटीन-स्तर पर होता है.

जीनोम की जानकारी से परम्परागत चिकित्सा पद्धति में परिवर्तन हो रहा है, अपराधों के मामले सुलझाए जा रहे हैं और जीवन की गुत्थी को समझने में मदद मिल रही है. प्रत्येक जीव के जीनोम (डी.एन.ए.) में मौजूद समस्त जीवों का अनुक्रम में अनके जीवन से संबंधित सारी जानकारी सूत्रबद्ध रहती है. हर जीव का जीनोम उसका प्रामाणिक पहचान-पत्र होता है. मानव जीनोम के उद्घाटन के अनगिनत लाभ हैं. इससे हमें अनेक आनुवांशिक रोगों, मधुमेह, हटिंग्टन व्याधि, पार्किंसन व्याधि, सिस्टिक फाइब्रोसिस, अनेक प्रकार के कैंसर आदि के बुनियादी कारणों को समझने और किसी व्यक्ति में इनके पनपने की संभावना को निर्धारित करने में मदद मिल सकती है. अधिकांश विशेषज्ञों का मत है कि जीनोम की व्यक्तिगत जानकारी सबके लिए उपयोगी हो सकती है, जीवन-शैली में बदलाव ला सकती है तथा शीघ्र और प्रभावकारी इलाज प्रस्तुत कर सकती है.

जीनोम हर प्राणी का अभिन्न अंग होता है, जो उसके शारीरिक, मानसिक और व्यावहारिक गुणों को नियंत्रित करता है. जीनोम जीनों से बनता है और डी.एन.ए. से ही प्रोटीन की उत्पत्ति होती है, जो किसी भी प्राणी की कोशिका के महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करते हैं. भिन्न-भिन्न प्राणियों के जीनोम पढ़ने का कार्य जीनोम परियोजना के अन्तर्गत सम्पन्न किया जाता है. वास्तव में यह एक बहुत बड़े स्तर का कार्य है, जहाँ सैकड़ों वैज्ञानिक और मशीन मिलकर किसी भी प्राणी के जीनोम को पढ़ते हैं और उस प्राणी विशेष की अलग-अलग जीवों को पहचान कर इस तरह सजाया

जाता है जैसे वे वास्तविक रूप में कोशिकाओं में होती है.

वैज्ञानिकों ने अब मानव की असली जन्म कुंडली को जान लिया है, इसका नक्शा तैयार कर लिया है, इसका अनुक्रम यानी क्रमिक सिलसिला प्रस्तुत कर दिया है. समूची मानव जाति का अतीत, वर्तमान और भविष्य इस कुंडली की आण्विक संरचना में सूत्रबद्ध है और वैज्ञानिक अब मानव जीवन की इस कुंडली के घटकों (जीनों) में रद्दो-बदल करने में समर्थ हो रहे हैं. इसके लिए जैव तकनीकी की विविध विधियां विकसित कर रहें है, आनुवांशिकी और विकास के एक नए युग की शुरूआत हो गई है. वैज्ञानिक अब मानव जीनोम (जीनों के अनुक्रम) को उसी तरह से पढ़ सकते हैं, जैसे किसी विश्वकोश को. जीवन का सृजन, संयोजन और नियोजन करने वाले महाअणु (डी.एन.ए.) के रहस्य खुलने लगे हैं.

वनस्पतियों एवं जीवों के विभिन्न ऊतकों में चलने वाली जैव-रासायनिक प्रक्रियाओं का अध्ययन नैनो-स्तर पर करने के लिए आज सूचना-प्रौद्योगिकी की सहायता ली जा रही है. उभरती हुई नैनो-प्रौद्योगिकी ने जैविकी, इलेक्ट्रॉनिकी एवं सूचना विज्ञान की चिन्तन धाराओं को एक-दूसरे के अत्यन्त निकट लाकर खड़ा कर दिया है. ऐसा विश्वास किया जा रहा है कि सुपर कम्प्यूटर की उदीयमान पीढ़ी कई लाख संसाधितों से सुसज्जित तथा कई करोड़ संक्रियायें प्रति सेकेण्ड की दर से कार्य करने में सक्षम होगी. नैनो-प्रौद्योगिकी पर आधारित इलेक्ट्रॉनिक युक्तियाँ जब सजीव द्रव्य से पारस्परिक क्रिया करेंगी तो आशातीत परिणाम सामने आने की संभावना बनेगी.

निश्चित रूप से नैनो-प्रौद्योगिकी के माध्यम से मानव-जीवन को और अधिक गहराई से समझा जा सकेगा. कोई आश्चर्य नहीं यदि सजीव तथा निर्जीव का अन्तर और भी कम हो जाए व जीवन के प्रति मानव को अपना दार्शनिक दृष्टिकोण परिवर्तित करने के लिए ही बाध्य होना पड़े और सार्वभौमिक चेतना के किसी अनछुये धरातल पर मानव अपने वैज्ञानिक ज्ञान के सहारे जा पहुँचे. नैनो-प्रौद्योगिकी की सहायता से हम जैविक कोशिकाओं की कार्य प्रणाली को अधिक विस्तार से समझने में सफल होंगे, साथ ही कम्प्यूटरों के लिए और भी सूक्ष्मचिपों के निर्माण की क्षमता हममें आ जायेगी, जिससे जैविकी के क्षेत्र में अनेक अभिनव अनुप्रयोग सम्भव होंगे.पदार्थ से आण्विक विन्यास को अनेक प्रकार से परिवर्तित कर वैज्ञानिक आज नैनो आकार की कणिकाएं, तार, रंध्रहीन ठोस पदार्थ और नैनो-आकार वाली संपुटिकायें कैप्सूल, बनाने के भी प्रयास कर रहे हैं.

मानव शरीर कई नैनो मशीनों के संयोजन से बना है. वास्तव में शरीर की प्रत्येक कोशिका में ऐसे असंख्य नैनोपुर्जे की बनावट या कार्य प्रणाली में फेरबदल का परिणाम है- अस्वस्थता, जिसका उपाय हम खोजते रहें हैं. जैसे लोहा लोहे को काटता है, वैसे ही कल्पना की जाती है कि ऐसी तकनीकें विकसित हो पाएं, जहां शरीर के नैनोपुर्जों को नैनोपुर्जों से ही चुनौती दी जाए. ऐसा निश्चय ही संभव है. बस ऐसे कुछ विशिष्ट पुर्जों की पहचान कर ली जाए जो केवल विशिष्ट कोशिकाओं में निहित हों और अस्वस्थता का कारण भी वही हों. नैनो चिकित्सा के अनेक उपक्षेत्रों में तेजी से लेकर औषधि वाहक तक अनेक पक्ष सम्मिलित हैं .

औषधि के भेजे गुणों में सुधार लाने के लिए वसा या बहुलक आधारित नैनोकणों को को औषधवाहनों के रूप में उपयोग में लाने के अनेक प्रयास जारी हैं. ऐसा माना जा रहा है कि अतिसूक्ष्म होने के कारण कोषिकाएं नैनोकणों को शीघ्रता से ग्रहण कर लेंगी, जबकि बड़े कणों का शरीर से निकास हो जाएगा. औषधि वाहकों के कुछ गुण भी मायने रखेगें, जैसे एक है, पारगम्यता ताकि उनमें कोशिका झिल्ली या दीवार को पार करने की सरलता हो. वह हर कोशिका झिल्ली को न लांघ पाएं, शरीर से उनका निकास भी धीमा हो.

वैज्ञानिकों ने औषधि प्रतिरोधी कैंसरों के लिए ऐसे वसीय नैनोकणों का विकास किया है, जो न केवल औषधि को सही या भेदी कोशिकाओं तक ले जाते हैं, अपितु उनके प्रतिरोधक गुण के प्रतिकारक भी रखते हैं. इन नैनोकणों का मुख्य अवयव वसीय पॉलीमर है, जो शरीर की प्रतिरोधक प्रणाली द्वारा नहीं पहचाना जा सकता है. पॉली (एथीलीन)-600 हाइड्रॉक्स स्टीएरेट जब प्रतिरोधक प्रणाली से बचकर कैंसर कोशिकाओं में प्रवेश करता है, तब यह नैनोकण से अलग हो जाता है, स्वतंत्र कोशिका के P-ग्लाइको प्रोटीन को निष्क्रिय कर देता है. P-ग्लाइको प्रोटीन औषधि प्रतिरोधक है और अपने साथ लाइ कैंसर विष औषध द्वारा कोशिकाओं को आहत करता है. नैनोकणों के मूल अवयव औषधि और पॉलीमर हैं, जिन्हें एक साधारण नैनोकण या डेन्डीमर का आकार दिया जा सकता है. यह प्रयोग चुहिया में सफल रहे हैं. इनके विषैले या कुप्रभावों पर अध्ययन कर इन्हें मनुष्य के लिए उपयोगी बनाया जा सकता है.

औषधि वाहकों की श्रेणी में जीन वाहक भी आ सकते है. क्योकिं कई रोगों के निवारण जीनांतरण से भी होगा. जीन चिकित्सा का विचार तो कब से काल्पनिक रहा है कि दवाओं की जगह सही, सक्रिय और निदेशित जीन डाल दिया जाए. बस सही जीन वाहकों की खोज चल रही है जो डी.एन.ए. या आर.एन.ए. को परस्पर क्षमता से, विशिष्ट

कोशिकाओं में ले जाकर छोड़ दें और फिर से अणु अपने सुनियोजित उपचार में जुट जाएं. जीन वाहक ऐसे पदार्थ भी हो सकते हैं जो कायिक प्रणाली में कहीं भी, किसी भी काम में आ सके.

ऐसे नैनो पदार्थों का विकास हुआ है जो कई कैंसरों और आनुवांशिक रोगों में प्रयोग हो सके अभी तक इस क्षेत्र में विषाणु उत्पन्न वाहक उपयोग में लाए जाते रहे हैं, जो झिल्ली को पार कर जीन को कोशिका के अंदर पहुंचाते हैं. इन पदार्थों में वाइरस आधारित जीन चिकित्सा, न तो सुरक्षित है और न ही उसकी प्रक्रिया को ठोस माना जा सकता है. अनायास ही कुछ उत्परिवर्तनों से जीन चिकित्सा के दौरान कैंसर के जीन का सक्रिय हो जाना तक देखा गया है .

नैनो पदार्थों द्वारा ऐसे पदार्थों की खोज जारी है जो चिकित्सा को विश्वसनीय और सुरक्षित बना सकें. नैनोकण-न्यूक्लिक अम्ल बंधक जीन कई तरीकों से कोशिकाओं तक पहुचाएं जा सकते हैं, जैसे द्रव्य त्वचा पर लेपकर, क्रीमों द्वारा श्वास द्वारा या पतली परतें बनाकर, सूइयों या प्राब्स द्वारा आदि.

जैविक अणुओं में स्वतः समायोजित होने की क्षमता पाई जाती है. जैविक अणुओं पर कार्य करने वाले वैज्ञानिक 'स्वतः समायोजन' नामक इस गुण से भली-भाँति परिचित हैं. वास्तव में जब विविध प्रकार के जैविक अणु ठीक-ठीक अनुपात में परस्पर मिश्रित हो जाते हैं तो कोशिकाओं एवं शरीर के विभिन्न अंगों की रचना होती है. जैविक अणुओं के स्वतः समायोजन के लिए नैनो-नलिकायें भी बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई हैं.

नैनो-नलिकाओं पर कतिपय रासायनिक पदार्थ के अणुओं का आवरण चढ़ाकर उन्हें इच्छित विन्यासों में स्वतः समायोजित किया जा सकता है. वैज्ञानिकों को आशा है कि निकट भविष्य में वे आण्विक-इलेक्ट्रॉनिकी एवं जैव-चिकित्सकीय युक्तियों को विकसित करने हेतु, जैविक अणुओं के स्वतः समायोजन में काम आनेवाली नैनो-नलिकाओं का निर्माण करने में सफल होंगे. अभी तक नैनो-आकार की कुछ कणिकाओं के स्वतः समायोजन हेतु अमेरिका में कुछ तकनीकियां विकसित

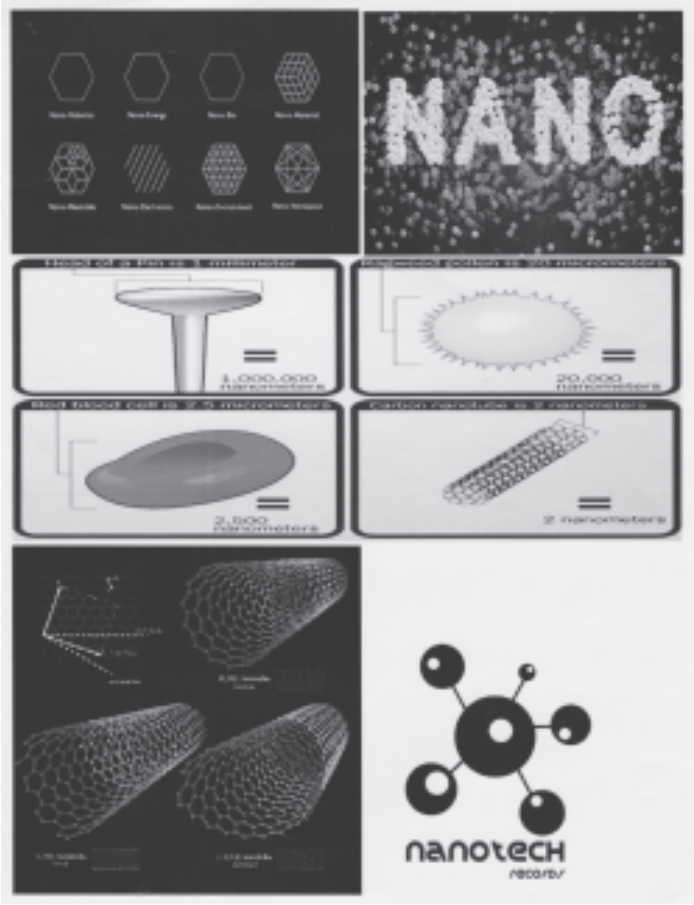

जैव रासायनिक प्रक्रिया और नैनो प्रोद्योगिकी

की जा चुकी है.

एक उल्लेखनीय तकनीक इस दिशा में यह है कि नैनो-कणिकाओं के द्वारा त्रिविम संपुटिकाओं (Three Dimensional Capsules) का निर्माण करने में वैज्ञानिकों को सफलता मिली है. उन्होंने देखा कि किसी तैलीय माध्यम में विलगित की गयी नैनो-कणिकाओं में जल की सूक्ष्म बूँद पर स्वतः समायोजित होने की प्रवृत्ति पायी जाती है. एक अन्य शोध के अनुसार जो नैनो-कणिकायें तेल में विलेय होती हैं, उनको विशिष्ट आवृतियों वाले प्रकाश से प्रकाशित करने पर वे जल में घुल जाती हैं. इस प्रकार प्रदीप्ति की घटना का सम्बन्ध सीधे नैनो-कणिकाओं से हो जाता है. आशा की जाती है कि आने वाले समय में यह अनुसंधान चिकित्सा के क्षेत्र में बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा. चिकित्सीय छायांकन तथा रोगों का पता लगाने की नवीन पद्धतियाँ इस अनुसंधान के कारण विकसित कर ली जायेंगी. शरीर में औषधि को वितरित करने और रूग्ण कोशिकाओं तक पहुँचाने में भी यह प्रणाली सहायक सिद्ध होगी.

एक अध्ययन के अनुसार कार्बन की अजैविक नलिकाओं के पृथक्करण में एकल कुण्डलित डी.एन.ए.अणु (Single Stranded DNA Molecule) बहुत सहायक सिद्ध होते हैं. डी.एन.ए. के विशाल जैविक अणु इन नैनो-नलिकाओं को दृढ़ता पूर्वक अपनी ओर खींच कर उनको अलग-अलग कर देते हैं. जैविक और अजैविक अणुओं के बीच का यह आकर्षण कौतूहल का विषय है.

नैनो-कणिकाओं को किसी अन्य सबस्ट्रेट पर उचित स्थितियों में समायोजित करके उनका उपयोग रोगों का पता लगाने और रोग की पहचान करने में कर सकते हैं. डी.एन.ए. और प्रोटीन अणुओं का संश्लेषण कार्बन की नैनो-नलिकाओं के साथ करके हम सर्वथा नवीन जैविक पदार्थों का निर्माण कर सकते हैं. ऐसा देखा गया है कि कुछ विशिष्ट बहुलकों अथवा प्रकाश संवेदी तत्वों को प्रोटीनों या डी.एन.ए. अणुओं में विसरित करा देने पर नैनो-नलिकाओं के गुणों में बड़ा परिवर्तन हो जाता है. वैज्ञानिकों ने साइटोसिन एवं गुआनिन सरीखी प्रोटीनों की कुण्डलित संरचनायें इस विधि से प्राप्त करने में सफलता अर्जित की है. इन प्रोटीनों का स्वतः समायोजन हाइड्रोजन बन्धों के माध्यम से कराया गया था. इन प्रयोगों को देखते हुए ऐसा लगता है कि नैनो-नलिकायें निकट भविष्य में नये पदार्थों, इलेक्ट्रॉनिक युक्तियों और आण्विक स्तर वाले नये विद्युत परिपथों के निर्माण में सहायक सिद्ध होंगी.

कार्बनिक नैनो-नलिकायें पानी जेसे व्यापक विलायक में भी नहीं घुलतीं. पानी में इनके न घुलने के इस गुण का उपयोग अनेक प्रकार से चिकित्सा के क्षेत्र में किये जाने की आशा है. एक अध्ययन के अनुसार जब जैविक पदार्थों का सम्बन्ध कार्बन की नैनो-नलिकाओं से कर दिया जाता है तो नैनो-नलिकायें पानी में घुलने लगती हैं. इनका सम्बन्ध यदि स्टार्च अथवा ग्लूकोसामीन के कर दिया जाये तो भी वे जल में घुल जाती है परन्तु विलयन में मनुष्य की लार मिला दी जाए तो लार में उपस्थित एमाइलेज नामक एन्जाइम विलयन के स्थायित्व को भंग करके कार्बन की इन नैनो-नलिकाओं को पुनः ठोस व कठोर रूप प्रदान कर देता है. वैज्ञानिक नैनो-नलिकाओं की सहायता से डी.एन.ए. चिप बनाने के लिए प्रयासरत हैं. यदि आने वाले समय में ऐसा सम्भव हुआ तो यह उपलब्धि इलेक्ट्रॉनिकी, जैविकी, चिकित्सा विज्ञान और भौतिकी इन सभी को एक-दूसरे के बहुत निकट ले आयेगी.

जैव-कोशिकाओं में चलने वाली क्रियाओं की सूचना प्राप्त करने के लिए उसी आकार के संवेदित्रों की आश्यकता पड़ेगी. अधिकांशतः इसके लिए किसी एंटीबाडी, एन्जाइम या ट्रांस्ड्यूसर प्रणाली का चयन किया जाता है. एन्जाइम अथवा एंटीबॉडी कोशिका में होने वाले रासायनिक परिवर्तनों को प्रकाश, विद्युत अथवा इसी प्रकार के किसी अन्य संकेतों में बदल देते हैं. नैनो-आकार वाले ये संवेदित्र रोगों को पहचानने तथा उनकी सफल चिकित्सा में बेहद प्रभावी सिद्ध होंगे. अभी औषधि का वितरण शरीर के रोग से प्रभावित भाग में उतना प्रभावी ढंग से नहीं हो पाता. नैनौ-संवेदित्रों की सहायता से औषधि को उसके लक्ष्य तक पहुँचाने में बड़ी सहायता प्राप्त होगी. शरीर में औषधि के ठीक वितरण न होने के कारण वह उन कोशिकाओं में भी चली जाती हैं जहाँ उसकी आवश्यकता नहीं है. स्वस्थ कोशिकाओं में पहुँचकर औषधि वहाँ अपना दुष्प्रभाव छोड़ती है. यह दुष्प्रभाव मानव के शरीर पर अनेक रूपों में प्रकट होता है.

कैंसर और ट्यूमरों का उनकी प्रारंभिक अवस्था ही पता लगाने में भी नैनो संवेदित्रों की भूमिका महत्वपूर्ण है. नैनो-कणों पर रोग के एंटीबाडीज का आवरण चढ़ाकर तथा चुम्बकीय अनुनाद छायांकन (MRI-Magnetic Resonance Image) तकनीक का प्रयोग करके कैंसरों का उनके प्रथम चरण में ही पता लगाया जा सकता है और उनका प्रभावी ढंग से उपचार किया जा सकता है. इतना ही नहीं, बल्कि धमनियों में वसा के जमाव के कारण जो कठोरता आ जाती है, नैनो-संवेदित्रों से इसकी भी सूचना प्रारम्भिक अवस्था में ही प्राप्त हो जाती है और वसा के उस कठोर जमाव पर एंजियोप्लास्टी या बाई पास सर्जरी द्वारा नियंत्रण पाया जा सकता है.

जैव-वैज्ञानिक इस प्रकार के जैविक अणुओं को प्राप्त

करने हेतु प्रयतन्शील हैं जिनकी कैंसर ग्रस्त कोशिकाओं से बंधुता हो. नैनो-आकार वाले सूक्ष्म तार इन जैविक अणुओं को रोगी अणुओं के साथ दृढ़तापूर्वक आबद्ध कर देंगे और जब ये अणु अपने रासायनिक संदेश देना प्रारम्भ कर देंगे जिनको किसी उचित ट्रांस्ड्यूसर प्रणाली द्वारा अकूटित (Decode) कर उनका विश्लेषण किया जा सकता है.

ऐसी आशा की जाती है कि निकट भविष्य में इस प्रणाली का उपयोग करके आज से हजारों गुना अधिक संवेदनशील संवेदित्र विकसित कर लिये जायेंगे जिसके फलस्वरूप एक-एक प्रोटीन अणु और एक-एक कोशिका को जाँचने-परखने में वैज्ञानिक सफल हो जायेंगे. वे अणुओं को मनचाहे ढंग से चला सकेंगे और उनकी संरचना तथा विन्यास को स्वेच्छा से परिवर्तित कर सकेंगे.

डी.एन.ए. संवेदित्र के रूप में कई दीवारों वाले नैनो-नलिकाओं के प्रयोग के भी प्रयास किये जा रहे हैं. इन संवेदित्रों के एक से तीन बिलियन नैनो-नलिकाओं को संवेदित्र के प्रति वर्ग सेंटीमीटर क्षेत्रफल में संकुलित कर दिया जाता है और डी.एन.ए.की कुण्डलियों को इन नैनो-नलिकाओं में फँसा देते हैं. डी.एन.ए., प्रोटीनों, जैव-रासायनिक अभिक्रियाओं तथा जीनों के उपद्रवों के फलस्वरूप उत्पन्न रोगों की सूचना प्राप्त करने के लिए नैनौ-नलिकाओं से निर्मित ये सेंटीमीटर आकार वाले छोटे-छोटे संवेदित्र भविष्य में बहुत सहायक सिद्ध होंगे. इस प्रकार के संवेदित्रों को विकसित हो जाने पर किसी औषधि के सकारात्मक अथवा नकारात्मक प्रभाव का अध्ययन हजारों लाखों व्यक्तियों पर एक साथ सफलतापूर्वक किया जा सकेगा और इस परीक्षण के लिए रक्त की मात्र एक छोटी-सी बूँद ही पर्याप्त होगी.

नैनो-कणिकाएं रक्त में प्रोटीनों के सान्द्रण का अनुमान कर सकती हैं. रक्त में प्रोटीनों की सान्द्रता का सीधा सम्बन्ध हृदय रोगों के प्रति मानव के जोखिम से होता है. अतः रक्त में प्रोटीनों की सान्द्रता ज्ञात होने पर हृदय रोगों के प्रति पहले से ही हम आगाह हो सकते हैं, और समय रहते सुरक्षात्मक कदम उठा सकते हैं. गोल्ड-नैनो कणिकाएं हमारे डी.एन.ए.से चिपक जाती हैं तो आँतों के कैंसर एवं यौन रोगों के प्रति शरीर की प्रतिरक्षी क्षमता के ह्रास की सूचना हमें समय रहते देने लगती हैं.

ऊतकों एवं कोशिकाओं में विभिन्न प्रकार के अणुओं को लक्षित करने के लिए वैज्ञानिक चुम्बकीय नैनो-कणिकाओं का निर्माण करने में जुटे हुए हैं. आण्विक मोटरें भविष्य में सूक्ष्म-यंत्र डी.एन.ए. अनुवादन, कोशिकीय परिवहन तथा पेशीय संकुचन की क्रियाओं में चिकित्सकों की सहायता करेंगी. रसायनविद् अनेक प्रकार कार्बनिक अणुओं को संश्लेषित कर कई प्रकार की आण्विक मोटरें बनाने का प्रयतन कर रहे हैं. प्रायः चिकित्सा विधि में रोगी के शरीर में औषधी अधिक मात्रा में पहुँच जाती है. नैनो आकार के इस प्रकार के स्पंजी अणु विकसित किये जाने के प्रयास चल रहे हैं जो शरीर के भीतर उपस्थित औषधि के अणुओं की अतिरिक्त मात्रा का अवशोषण कर उन्हें बिना किसी हानि के शरीर के बाहर कर देंगी. अनेक प्रकार के वसीय अणुओं से युक्त नैनो-नलिकायें औषधियों की अतिरिक्त मात्रा को अपने भीतर घोल लेती हैं. ये नैनो-नलिकायें भविष्य में रोगी के शरीर में औषधियों के दुष्प्रभाव को रोकने में प्रभावी सिद्ध हो सकती हैं.

जीनोमिकी के क्षेत्र में निरंतर हो रही प्रगति को देखने हुए यह अनुमान लगाया जा रहा है कि जीनोमिक्स से प्राप्त सूचना नये लक्ष्यों की खोज करने तथा नई औषधियों को तैयार करने में काफी उपयोगी सिद्ध होगी.

वैज्ञानिकों के सामने जीनोम अनुक्रम में छुपी हुई अनेक गुत्थियों को सुलझाने का लक्ष्य है. इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए उन्हें बड़े पैमाने पर समाज को भी सहभागी बनाने की आवश्यकता है. इसके लिए अत्यंत सूझ-बूझ और विवेक के साथ काम करने की जरूरत है ताकि किसी प्रकार की कानूनी सामाजिक एवं नैतिक समस्याएं उत्पन्न न हों.

चिकित्सा के क्षेत्र में निदान के बिना निवारण हो ही नहीं सकता है वरना वह अंधेरे में तीर चलाने वाली बात हो जाती है . निदान के लिए सेन्सर अहम होते है. सेंसर प्रणाली में नैनोकणों के कई भौतिक गुणों का प्रायोग किया जा सकता है जैसे ऊर्जा मेकेनिक्स, प्रकाशीय गुण, संचालक या चुम्बकीय गुण और स्थाई फ्लोरेसेन्स आदि. सबसे अधिक चर्चा में हैं-नैनो या क्वॉन्टम डॉटस, क्योंकि इन कणों का फ्लोरेसेन्स स्थाई होते हैं. अगर इन कणों को किसी बहुलक में लपेटकर कोशिकाओं या शरीर पर प्रयोग करें तो प्रभाव को बहुत दिन तक देखा जा सकता है. क्वॉन्टम डॉटस को सुरक्षित परत में लपेट कर विभिन्न प्रोटीन या एंटीबाडी से जोडकर, मल्टीडिटेक्शन किट बनाए जा सकते हैं.

जीनोमिक्स के क्षेत्र में काफी प्रगति हो चुकी है. परस्पर प्रौद्योगिकीय सहयोग बढ़ने से अब अनेक देश इस क्षेत्र में जानकारी एवं कुशलता हासिल कर रहे हैं. विशेषज्ञों का मानना है कि नई जीनोमिक्स परियोजना से नए युग का सूत्रपात होगा. विभिन्न रोगों के उपचार/निदान हेतु तेज असर करने वाली किफायती, निजीकृत तथा रोगों का पूर्वानुमान करते हुए पहले से ही सक्रिय हो जाने वाली चिकित्सा प्रणाली अपनाई जायेगी.

सम्पर्क : **35/3 जवाहरलाल नेहरू रोड, जार्ज टाउन, इलाहाबाद**

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में द्वितीय पुरस्कार प्राप्त लेख

वनस्पति विज्ञान के अध्ययन में जीवाश्मों का महत्व

- डॉ. हेमलता पंत

जीवधारियों अथवा पेड़ पौधों के लगभग पूर्ण रूप से परिरक्षित अवशेष या उनकी विगत उपस्थिति के साक्ष्य ही जीवाश्म कहलाते हैं. पेड़-पौधे तथा प्राणियों के कठोर प्रत्यंग अवसादी (सेडिमेन्टरी) शिलाओं में निक्षेपण (डिपॉजिशन) के समय ही दफन हो जाते हैं अतः वह संरक्षित हो जाते हैं और कालान्तर में जीवाश्म बन जाते हैं. यह दुहरे उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं. यह पृथ्वी पर न केवल जीवन इतिहास के पृष्ठ खोलते हैं वरन पृथ्वी के भौतिक इतिहास के विषय में भी जानकारी देते हैं. भूवैज्ञानिकों और पुरावनस्पतिशास्त्रियों के लिये जीवाश्म का विशेष महत्व है क्योंकि वह इनके अध्ययन से पृथ्वी के प्राणीजगत तथा वनस्पति जगत के रहस्य खोलने में सफल होते हैं. यदि जीवाश्म सजीव होकर वर्तमान समय में हमारे सामने आ जायें तो हमे आश्चर्य तो होगा ही हम यह भी सोचने के लिये विवश हो जायेंगे कि क्या यह संभव है और यदि संभव है तो किस तरह? ऐसे अनेक प्रश्नों का हमारे मन-मस्तिष्क में उठना स्वाभाविक है और यही हमारे इस प्रस्तुत आलेख की विषय वस्तु है. यद्यपि यह चमत्कार प्राणीजगत और वनस्पति जगत दोनों ही जगतों में होता है परन्तु इस आलेख में अध्ययन मात्र पादपों तक ही सीमित है.

सजीव जीवाश्म (लिविंग फॉसिल) : यदि प्राणी अथवा वनस्पति की किसी भी प्रजाति के जीवाश्म उपलब्ध हों और वह प्रजाति आज भी जीवित हो तो उसे सजीव जीवाश्म कहते हैं यद्यपि यह एक अनौपचारिक शब्द है. इसका अर्थ यह भी हुआ कि ऐसी प्रजातियां प्रमुख विलोपन (एक्सटिन्कशन) घटनाओं में भी जीवित रह गई और इन्होंने निम्नतम वर्गीकरण विविधताओं को बनाये रखा. इसके लिए यह भी कहा जा सकता है कि सजीव जीवाश्म वह प्रजाति है जो अपने अत्यंत दीर्घ जीवन काल में कभी नहीं बदली जैसे वह अमर हो.

सजीव जीवाश्म और लेजेरस वर्गक (टैक्सा) में अति सूक्ष्म अंतर होता है क्योंकि यह उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है (इसकी एक प्रजाति या प्रजातियों का समूह) जो जीवाश्म के रूप में तो ज्ञात है ही परन्तु यह अचानक एक प्रांतराल के पश्चात पुनः या तो जीवाश्मों के अभिलेख में ही या फिर वर्तमान समय में अवतरित हो जाता है. इसके लिये यह भी कहा जा सकता है कि जैसे कोई जीवाश्म पुनः जीवित हो उठा हो. सामान्यतया किसी संघ (फायलम) के

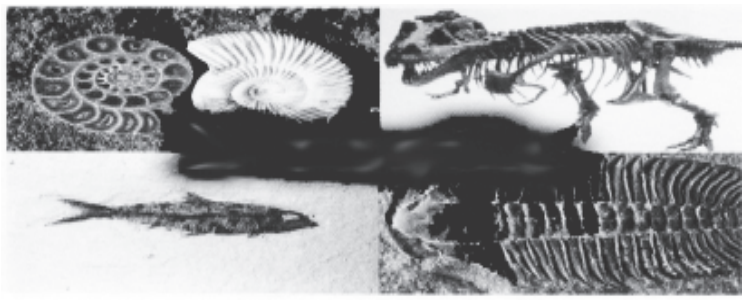

विभिन्न प्रकार के जीवाश्म

अंतर्गत प्रजातियों का उलटाव बहुत अधिक परिवर्तित होता रहता है परन्तु औसतन इस प्रक्रिया में एक प्रजाति को 20 से 30 लाख वर्ष लग जाते हैं. अतः कोई भी प्रजाति जो आज प्रकृति में विद्यमान है जिसके विषय में यह भी ज्ञात है कि वह जीवाश्म के रूप में मिलती है लेजेरस वर्गक कहा जा सकता है जब तक यह स्थापित न हो जाये कि इस प्रजाति का अस्तित्व कभी समाप्त नहीं हुआ. कोई सजीव जीवाश्म संबंधित प्रजाति जीवाश्म के रूप में बहुत दिनों से ज्ञात थी परन्तु वर्तमान समय में आज तक वह विद्यमान है यह बाद में खोजा जा सका. इसका एक अच्छा उदाहरण है जीन की एक दूरवर्ती घाटी में खोजी गई क्यूप्रेशेसी कुल की डान रेडवुड (मेटासीक्वोइआ). सजीव जीवाश्मों में एक और ध्यान देने की बात है कि यह आवश्यक नहीं है कि उन्हें पुरातन वंशावली के बचे हुए प्रतिनिधि के नाते आदिकालीन वंश के समस्त लक्षणों युक्त होना चाहिए जिससे वह उत्पन्न हुए है. आवश्यक यह है कि इन्हें निश्चित रूप से अपने जीवाश्मित वंशज के समरूप होना चाहिए. इस शब्द का सर्वप्रथम चार्लस डारविन ने अपनी पुस्तक 'ऑन द ओरिजिन ऑफ स्पेशीज' में प्रयोग किया था.

अनौपचारिक रूप से उल्लेख किये गये सजीव जीवाश्मों की सूची निम्नलिखित है :-

- अम्बोरिलेसी - यह न्यू कैलिडोनिया का एक पादप है और संभवतः यह पुष्पधारी पादपों के प्रारम्भिक चरण का निकटवर्ती है.
- अरैकेरिया अरैकाना : बंदर पहेली (मंकी पजल) वृक्ष
- गिन्गो वृक्ष (गिंगोएसी)
- हार्सटेल्स - इक्वीसीटम (इक्वीसिटेसी)
- मेटासीक्वोइआ - डान रेडवुड (क्यूप्रेशेसी-सीक्वोइआ और सीक्वेडेन्ड्रान से संबंधित एक सीमावर्ती उदाहरण)
- सियाडोपिटिस - वृक्ष (सियाडोपिटिएसी)
- लिक्विडअम्बर - वृक्ष (आलटिंगिएसी)
- व्हिस्क फर्न्स - सिलोटम (सिलोटेसी)
- वेलविस्चिया (वेलविस्चिएसी)
- वूलेमिया वृक्ष (अरैकेरिएसी - अगाथिस और अरैकिया से संबंधित सीमावर्ती उदाहरण)

उक्त समस्त पादपों में से निम्नलिखित चार सजीव जीवाश्मों के उदाहरण के लिये आवश्यक विवरण दिये गये हैं :

अरैकेरिया अरैकाना : चित्र-1-अ, ब तथा स : अरैकेरिया अरैकाना अरैकेरियेसी कुल से संबंधित है और आम तौर पर इसको 'मंकी पजल' या 'विलियन पाइन' कहा जाता है. यह सदाबहार वृक्ष है और इसकी अधिकतम ऊँचाई लगभग 40 मीटर (130 फुट) तक और मोटाई 2 मीटर (7 फुट) तक होती है. यह मध्यवर्ती और दक्षिणी चिली तथा पश्चिमी अर्जेन्टीना में पाया जाता है. कोनीफर वंश की यह सर्वाधिक दृढ़ प्रजाति है. इसका वृक्ष बहुत दीर्घायु होता है और लगभग 1000 वर्ष तक जीवित रहता है अतः इसके कारण इसको सजीव जीवाश्म कहते हैं. अरैकेरिया अरैकाना सच्चे अर्थों में सजीव जीवाश्म हैं क्योंकि वह अनेक हिमनदनों के, आप्लावनों के, ज्वालामुखियों के फटने के तथा विवर्तनिक प्लेटों की सक्रियता के साक्षी रहे हैं. यह वृक्ष पृथ्वी पर विगत 2 हजार लाख वर्षों से (निम्न जुरैसिक) विद्यमान हैं.

चित्र-1 (अ) : चिली के एन्डीज पर्वत पर उगा अरैकेरिया अरैकाना का वृक्ष, (ब) : अरैकेरिया अरैकाना की पत्तियां मादा कोन सहित, (स) : जीवाश्मित काष्ठ

इस वृक्ष की पत्तियां मोटी, मजबूत और शल्क जैसी तिकोनी और लगभग 3 से 4 से.मी. लम्बी तथा 1 से 3 से.मी. तक चौड़ी होती हैं. पत्तियों के किनारे तथा शीर्ष भाग धारदार होते हैं. पत्तियां 10 से 15 वर्ष तक वृक्ष पर हरी-भरी रहती हैं. इसके वृक्ष एकलिंगाश्रयी होते हैं अर्थात इनमें नर तथा मादा शंकुफल (कोन) अलग अलग वृक्षों पर आते है

और हवा द्वारा इनका परागण होता है. जून-जुलाई में इसमें फूल आते हैं और सितम्बर-अक्तूबर तक शंकुफल बन जाते हैं. नर तथा मादा वृक्षों के अलग-अलग होने के कारण इनको साथ-साथ उगाना चाहिए ताकि परागण हो सके अन्यथा इनमें बीज नहीं बनेगा. इसके बीज खाये जाते हैं तथा बड़े पाइन नट के समान होते हैं. चिली में बड़े पैमाने पर इनको उगाया गया है और अच्छा उत्पादन होता है. मादा शंकुफल के पकने पर उसमें से लगभग 200 गिरीदार बीज निकलते हैं. लेकिन यह बीच तभी उत्पादित हो पाते हैं जब वृक्ष 30 से 40 वर्ष का हो जाता है.

चिली तथा अर्जेन्टीना के दक्षिणी मध्य एन्डीज पर्वत श्रेणियों के निचले ढलानों पर 1000 मीटर की ऊंचाई के ऊपर यह प्राकृतिक रूप से पाये जाते हैं. किशोर वृक्ष पिरामिड के आकार के या शंक्वाकार होते हैं परन्तु परिपक्व आयु पर यह छतरी का आकार ले लेते हैं. यह कुछ कुछ अम्लीय और अच्छी तरह पानी शोषित करने वाली ज्वालामुखीय काली मिट्टी को प्राथमिकता देते हैं.

अमेरिकी आदिवासी मापूची इस वृक्ष को पवित्र मानते हैं. लेकिन इस वृक्ष का तना सीधा और बहुत लम्बा होता है अतः इसकी लकडी का उपयोग हो सकता था इसलिये 1971 से कानून बना कर यह वृक्ष संरक्षित कर दिया गया है.

वूलेमिया नोबिलिस : चित्र-2-अ, ब तथा स : वूलेमिया अरैकेरियेसी कुल का शंकुधारी (कॉनिफरस) वृक्ष है. यह मात्र जीवाश्मों के अभिलेख के आधार पर अभी तक ज्ञात था. परंतु अब आस्ट्रेलिया की प्रजाति वूलेमिया नोबिलिस की खोज न्यू साउथ वेल्स में वूलेमी नेशनल पार्क स्थित जंगलों से हो चुकी है. यद्यपि आज तक वनस्पति विज्ञान और सामान्य प्रचलित साहित्य में यह वृक्ष वूलेमी पाइन के नाम से विख्यात था जबकि यह वास्तव में पाइन नहीं है और न तो यह पाइनेसी कुल का सदस्य है. वरन यह अरैकेरियेसी कुल की अगाथिस तथा अरैकेरिया से संबंधित है. वूलेमिया के प्राचीनतम जीवाश्म 20 करोड़ वर्ष पूर्व निम्न जुरैसिक शैल से मिले हैं. वूलेमिया वंश को अंतर्राष्ट्रीय संघ की प्रकृति संरक्षण की लाल सूची 2002 के अनुसार अति संकट कालीन स्थिति में घोषित किया है और आस्ट्रेलिया में यह कानून से संरक्षित है.

वूलेमिया नोबिलिस एक सदाबहार वृक्ष है जो 80 से 130 फुट तक ऊंचा होता है. इसकी छाल बड़ी विशिष्ट गहरे भूरे रंग की गुमटेदार होती है. इसके अनेक वृक्ष बहुतनों वाले होते हैं लगता है जैसे तनों का झुरमुट बन गया हो यहां तक 100 विभिन्न आकार के तनें एक वृक्ष में प्रेक्षित किये गये हैं. तनों में शाखायें बड़ी विशेष होती हैं. यह तने के पार्श्व से निकल कर फिर कभी विभाजित नहीं होती और एक सीमा तक बढ़ती हैं. इनके अग्र सिरे पर या तो कोन निकल आता है या फिर यह स्वयं बढ़ना बंद कर देती है. कोन के झड़ने पर यह शाखा सूख जाती है और फिर नई शाखा निकलती है. पत्तियां रेखीय, सपाट 3 से 8 से.मी.लम्बी और 2 से 5 मि.मी. चौड़ी होती है यह शाखाओं पर सर्पिल क्रम में लगी रहती है लेकिन शाखा के आधारीय भाग में इस प्रकार से ऐंठनयुक्त गुथी हुई होती है कि वह दो या चार कतारों में दिखाई पड़ती हैं. जब पत्तियां परिपक्वता की स्थिति में पहुंचती हैं तो यह चमकदार हरे से पीलापन लिये हरित दिखाई पड़ती है. बीज वाले शंकुफल (कोन) 6 से 12 से.मी.लम्बे तथा 5-10 से.मी. व्यासवाले होते हैं जबकि नर शंकुफल (कोन) पतले 5 से 11 से.मी. लम्बे और 1 से 2 से.मी. चौड़े होते हैं. वायु परागण होने के पश्चात 18 या 20

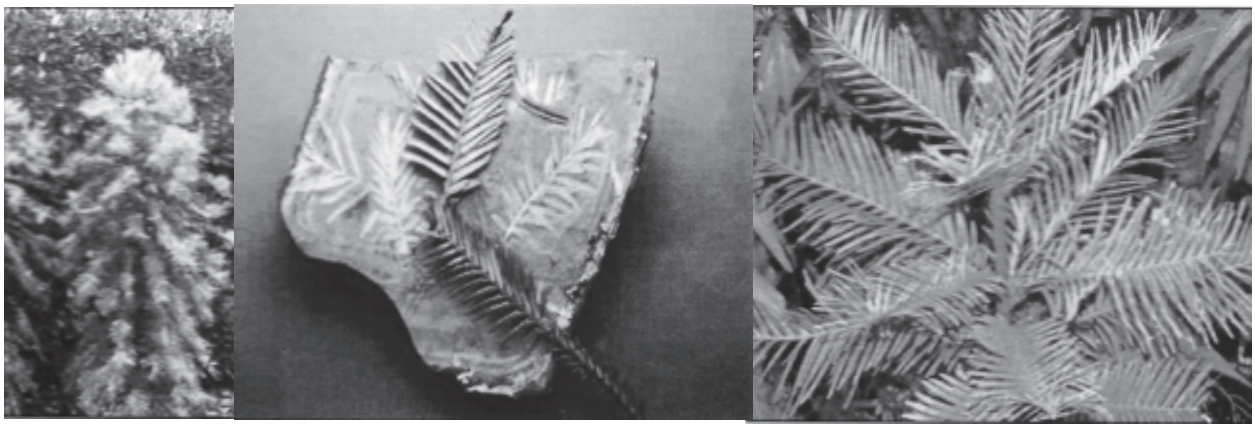

चित्र-2 अ : वूलेमिया नोबिलिस का वृक्ष, (ब) : वूलेमिया नोबिलिस का कम आयु का नर्सरी में उगाया पादप पत्तियों का स्पष्ट आकार प्रदर्शित करता हुआ, (स) : शेल में पत्तियों की छाप के जीवाश्म

महीने में यह पक जाते हैं और पकने पर फूटकर बीज बिखर जाते हैं. बीज छोटे, भूरे कागज की तरह पतले तथा पंखदार होते हैं ताकि बीजों का वितरण अच्छी तरह हो सके. पूर्ण विकसित वृक्ष बहुत लम्बी आयु वाले होते हैं. कुछ पुराने वृक्षों की आयु 500 से 1000 वर्ष आकलित की गई है.

वूलेमिया से मिलते जुलते संबंधित जीवाश्म आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैन्ड और अंटार्कटिका में बडे पैमाने पर मिलते हैं. वूलेमिया नोबिलिस मात्र अकेला इस वंश (जीनस) का जीवित सदस्य है. इस वंश का जीवाश्म 20 लाख वर्ष पुरानी आयु के शैल में मिला है.

मेटासीक्वोइआ ग्लाइप्टोब्वाइडिस : (चित्र-3 अ,ब,स, तथा द) : इसको आमतौर पर डान रेडवुड कहते हैं यह एक कोनीफर है जिसमें अपने निकट संबंधियों तटीय रेडवुड और वृहदाकार सीक्वोइआ के विपरीत प्रत्येक वर्ष पतझड़ होता है. डान रेडवुड के निकट संबंधित प्रजातियों के जीवाश्म निम्न क्रिटेशियस में मिलते हैं और यह उत्तरी गोलार्द्ध में लगभग सभी स्थानों पर पाये जाते हैं. इन जीवाश्मों के हो चुकी है. अभी जो जापान से इसके नवीनतम जीवाश्म मिले हैं वह निम्न प्लिस्टोसीन (20 लाख वर्ष) से हैं. चीन से इसकी जीवित प्रजाति निकट विगतकाल में मिली है और अब यह प्रजाति विशेष संकट में है क्योंकि यह उद्यान कृषि के व्यापार में हैं. हाल ही में चीन के शोधकर्ताओं ने हुनान प्रांत से इसका एक अकेला नमूना खोज निकाला है जो जीवाश्मित डान रेडवुड के एकदम समान हैं अतः इसे सजीव जीवाश्म कहना सर्वाधिक तर्क संगत है.

गिन्गो बाईलोबा : (चित्र-4 अ,ब तथा स) : गिन्गो सर्वाधिक प्राचीन वृक्षों में सम्मिलित हैं. इनके अति प्राचीन प्रतिनिधियों के जीवाश्म परमियन कल्प (2800 लाख वर्ष) की शिलाओं में पाये जाते हैं. भौमिकीय अतीत में इनका बाहुल्य था और डाइनोसॉरस का यह अवश्य भोजन रहे होंगे. गिन्गो अडिआनटवाइडिस जिसे आधुनिक गिन्गो से भेद करना मुश्किल है के जीवाश्म निम्न क्रिटेशियस (1400 से 1000 लाख वर्ष) कल्प में मिले हैं. ऐसा लगता है वह काल गिन्गो परिवार के लिये स्वर्णकाल था.

चित्र-3 अ : मेटासीक्वोइआ ग्लाइप्टोस्ट्रोब्वाइडिस का वृक्ष, (ब) : उक्त प्रजाति का वृक्ष जिसकी पत्तियां शरदकाल में लाल हो गई हैं (स)- उक्त प्रजाति की पत्तियां (द) : ब्रिटिश कोलम्बिया, कनाडा में इओसीन काल की ट्रैन्किवुल शेल में पत्तियों की छाप के जीवाश्म

लिये सबसे प्रसिद्ध स्थान है कैनाडा के आर्कटिक भाग में एक्सिल हीवर्ग द्वीप जहां इओसीन युग (450 लाख वर्ष) के मेटासीक्वोइआ पत्तियों के जीवाश्म मिलते हैं.

जीवाश्मित मेटासीक्वोइआ ग्लाइप्टोस्ट्रोब्वाइडिस का वर्णन सर्व प्रथम 1941 में किया गया यद्यपि इसके जीवाश्मों के विषय में पहले से ज्ञात था. लेकिन तब इसको वास्तविक रेडवुड तथा दलदलीय साइप्रस टेक्सोडियम समझते रहे. यह भ्रम लगभग एक शताब्दी तक बना रहा और उक्त प्रजाति के विषय में यह सोचा जाता था कि वह बहुत पहले ही विलुप्त

गिन्गो के जीवाश्म उत्तरी गोलार्द्ध में जुरैसिक से मायोसीन काल तक की शिलाओं में पाये जाते हैं. उत्तरी अमेरिका से यह प्लायोसीन काल से विलीन हो गये और यूरोप में प्लिस्टोसीन काल सें नहीं मिलते है. इसके पश्चात जंगलों से इनका अस्तित्व जैसे मिट सा गया था अथवा यह विलुप्त हो गये थे परन्तु चीन के बौद्ध विहारों में यह बचे रहे क्योंकि वहां इनको नर्सरी में उगाया जाता था. लगभग एक हजार वर्ष पूर्व इनको एशिया के अनेक देशों में लगाया जाने लगा तब कहीं जाकर इनका पुनः प्रसार हुआ. आजकल गिन्गो

वृक्ष सड़कों पर उगा हुआ और सजावट करता हुआ एक जाना-पहचाना वृक्ष हैं. गिन्गो वृक्षों की आयु बड़ी दीर्घ होती है कुछ ऐसे वृक्ष भी अभिलेखित किये गये हैं जिनकी आयु 2500 वर्ष पहुंच चुकी है.

वृक्षों की दीर्घ आयु. इनके भौतिक संलक्षणों की निरंतरता और इनकी जिजीविषा तभी तो यह सम्भव हुआ कि गिन्गो प्रजाति के 6 वृक्ष हिरोशिमा पर गिरे अणुबम का प्रहार झेल गये और आज भी वह उस त्रासदी के मूक

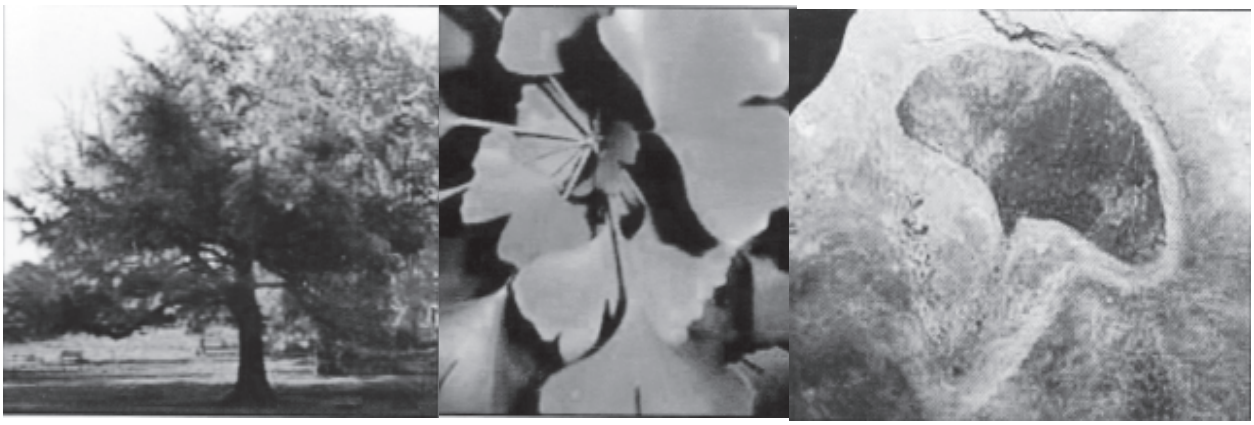

चित्र-4 (अ) : गिन्गो बाइलोवा का वृक्ष, (ब) : गि.बाईलोबा की पत्तियां, (स) : ब्रिटिश कोलम्बिया, कनाडा में ट्रैन्किवुल शेल में संरक्षित इओसीन काल की उक्त प्रजाति की पत्तियों की छाप के जीवाश्म

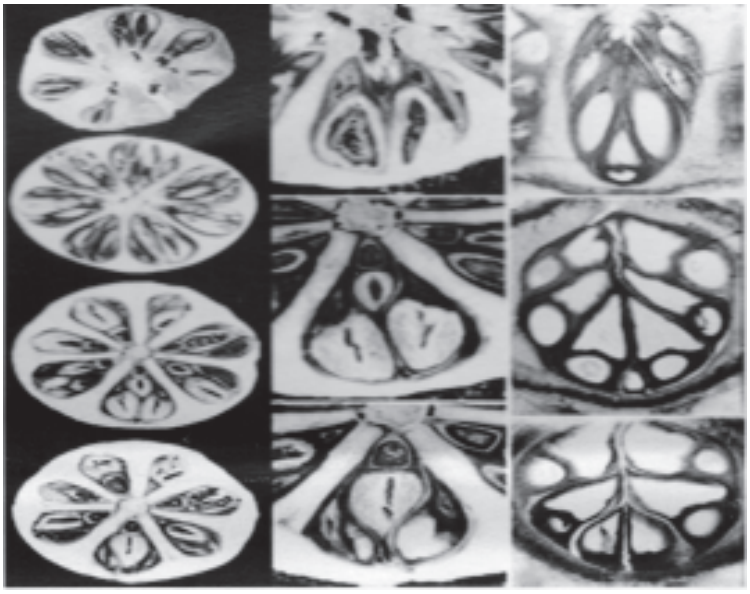

पौधों की प्रजाति को पहचानने हेतु जीवाश्मों के भीतरी (अन्दरूनी) भागों का अध्ययन

उक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो गया है कि जीवाश्मित पादपों का गंभीर अध्ययन करने के पश्चात ही पुरावनस्पतिज्ञ इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि सजीव जीवाश्मों की पृथ्वी पर उपस्थिति कोई आश्चर्यजनक घटना नहीं वरन वैज्ञानिक सत्य है. कुछ तथ्य जो सचमुच ध्यानाकर्षक हैं वह है इन दर्शक शांत मौन प्रार्थना की मुद्रा में खड़े होकर दिवंगत आत्माओं के लिये चिर शांति की कामना कर रहे हैं.

सम्पर्क : **वैज्ञानिक, एस.बी.एस.आर.डी., 10/96 गोला बाजार, न्यू झूसी, इलाहाबाद-211010**

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में तृतीय पुरस्कार प्राप्त लेख

ग्रह नक्षत्र वाटिका

- डॉ.नवीन कुमार बोहरा एवं डॉ.प्रवीण गहलोत

भारतीय ज्योतिष शास्त्र में राशि की संख्या-12, ग्रह की संख्या-09 व नक्षत्र की संख्या-27 मानी गई है. ग्रह के विभिन्न नाम निम्न श्लोक के अनुसार हैं -

सूर्य्यचन्द्रो मंगलश्च बुधचापि बृहस्पतिः ।
शुक्रः शनेश्चरो राहुः केतुश्चेति नवग्रहा ।।

अर्थात सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि राहु और केतु में नव ग्रह है (कल्पद्रुम)

इसी प्रकार आकाश को 27 बराबर भागों में बांटा गया जिसके हर एक भाग को नक्षत्र कहते हैं. प्रत्येक जातक की जन्म कुण्डली में ग्रहों की स्थिति एवं नक्षत्र का विशेष स्थान होता हैं. ये ग्रह व नक्षत्र जातक की जन्म कुण्डली पर अपना लाभदायक या हानिकारक प्रभाव दिखाते है. लाभदायक प्रभाव के लिए ग्रह व नक्षत्रों की स्थिति अनुकूल एवं हानिकारक प्रभाव के लिए ग्रहों व नक्षत्रों की स्थिति प्रतिकूल होती है. जन्म कुण्डली से संबंधित राशि ग्रह व नक्षत्रों का पौधा अपने घर में लगाने, उनकी प्रतिदिन पूजा करने तथा जल सींचकर हानिकारक ग्रह-गोचर के प्रभाव को कम किया जा सकता है. जबकि अनुकूलित ग्रह से तुरंत लाभ का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है. ग्रह दोष निवारण हेतु ग्रह से संबंधित पेड़-पौधों की लकड़ियों से यज्ञ में आहुतियां देने से भी लाभ होता है. विभिन्न ग्रह-नक्षत्रों एवं राशियों से संबंधित पेड़-पौधों के नाम पौराणिक ज्योतिषीय ग्रन्थों में वर्णित है उसकी समग्र जानकारी नीचे वर्णित है -

1. सूर्य - संपूर्ण ब्रह्मण्ड का कर्ता सूर्य है. सूर्य से आत्मसिद्ध, सभी प्रकार की शिक्षा, शरीर में हड्डी के रोग, दिल की धड़कन इत्यादि का आंकलन होता है. सूर्य ग्रह से संबंधित वृक्ष का नाम अर्क (आक) है. वनस्पति शास्त्र में इसका वैज्ञानिक नाम *केलोट्रोपिस प्रोसेरा* है. सूर्य ग्रह को अनुकूल बनाने हेतु आक के पौधे की पूजा करनी चाहिए. पूजा में आक के पुष्पों का उपयोग करना चाहिए.

2. चन्द्र - चन्द्र ग्रह माता का कारक है. चन्द्र उच्च या अपनी राशि के घर में हो तो जातक विद्वान बनता है. उसे पैतृक मकान का सुख मिलता है. चन्द्र ग्रह से संबंधित वृक्ष का नाम पलास (ढाक) है. इसका वनस्पति शास्त्र में नाम *'ब्यूटिया मोनोस्पर्मा'* है. इसकी लकड़ी का हवन में उपयोग करके चन्द्रदोष का निवारण किया जा सकता है.

3. मंगल - प्राचीन ज्योतिषशास्त्र में सूर्य को राजा, चन्द्र और मंगल को सेनापति का पद दिया गया है मार-काट, हथियार चलाना, साहस, लड़ने की गति, व्यवहार आदि बातें जन्मकुण्डली में मंगल की स्थिति के अध्ययन से मालूम चलती है. इस ग्रह का संबंधित वृक्ष खादिर (खैर) है जिसका वनस्पति नाम *अकेसिया कटुचु* है. मंगल ग्रह दोष निवारण हेतु खैर वृक्ष को नित्य प्रतिदिन जल देना चाहिए.

4. बुध - जन्मकुण्डली में स्थित बुध की स्थिति से शिल्पकला, दस्तकारी, बुद्धिमता, व्यापार इत्यादि का आंकलन किया जाता है. अकेला बुध निरपेक्ष व निर्लिप रहता है. दूसरे, चौथे या छठे घर में बैठा बुध राजयोग कारक होता हैं. जातक को बुध श्रेष्ठ बनाने हेतु बुध से संबंधित वृक्ष चिचिड़ा, वनस्पति नाम *एकाइर्रेन्थस एस्पेरा* के फल (बीजों) को घर में रखना चाहिए. इनके फलों का उपयोग हवन सामग्री में मिलाकर हवन में करने से बुध ग्रह जन्म कुण्डली में उच्च हो जाता है.

5. बृहस्पति - जातक की जन्मकुण्डली में बृहस्पति उच्च हो तो वह जगत गुरू होता है. संतान, विद्या, बुद्धि, शासन द्वारा सम्मान, बड़प्पन आदि बातें बृहस्पति के शुभ होने पर प्राप्त होती हैं. बृहस्पति ग्रह से संबंधित वृक्ष का नाम पीपल है. इसका वनस्पतिक नाम *फाइकस रिलिजिओसा* है. भारतीय संस्कृति में इसका पूजन किया जाता है. अखण्ड सौभाग्य की मनोकामना पूर्ति हेतु, पति की दीर्घायु व सुखमय वैवाहिक जीवन हेतु महिलाएं पीपल का पूजन करती है. पीपल वृक्ष

धार्मिक आस्थाओं में सर्वोपरि है. पीपल में जल सींचने पर बृहस्पति ग्रह से संबंधित कार्य त्वरित गति से सम्पन्न होते हैं. बृहस्पति की अनिष्ठा को समाप्त करने के लिए पीपल की लकड़ी हवन के लिए सर्वोपयुक्त है.

6. शुक्र - शुक्र सुन्दरता का निर्धारण करता है. शुभ कार्य के लिए भी शुक्र का उच्च होना आवश्यक है. शुक्र से संबंधित वृक्ष *ओडम्बर (गूलर)* है इसका वनस्पतिक नाम *फाइकस ग्लोमेरा/फाइकस रेसीमोसा* है.

7. शनि - शनि नवग्रहों में सबसे बड़ा परन्तु बहुत धीमी गति से चलने वाला ग्रह है. शनि से मकान, धन सम्पत्ति, आयु, मृत्यु संतोष, हानि, मुकदमा, चोरी एवं वायु संबंधी रोगों के बारे में जानकारी मिलती है. शनि यदि शुभ राशि में हो तो जातक का कल्याण कर देता है. यदि यह अशुभ राशि या घर में बैठा हो तो हानि करता है. शनि ग्रह से संबंधित वृक्ष खेजड़ी (शामी या शमी) है. वनस्पतिक शास्त्र में इसका नाम *प्रोसोपिस सिनेरेरिया* है. शनि के हानिकारक प्रभाव को कम करने हेतु भैरव मन्दिर के पास शामी का वृक्ष लगाना चाहिए. विश्नोई समाज में शामी वृक्ष को सबसे पवित्र वृक्ष माना गया है. इस वृक्ष की कटाई करने से शनि उग्र हो जाता है व जातक को निश्चित हानि होती है.

8. राहु - कुण्डली में राहु के प्रभाव से शूरता, साहस, मोटापा, पहलवानी, पापकर्म, दुःख, चिंता, संकट आदि बातों का ज्ञान होता है. यह निर्धनों का मददगार होता है. इस ग्रह से संबंधित वृक्ष दूर्वा (दूब) घास है. इसका वनस्पति नाम *साइनोडोन डेक्टाइलान* है. राहु ग्रह के हानिकारक प्रभाव कम करने हेतु घर आंगन में दुवा घास लगानी चाहिए.

9. केतु - केतु एक छाया ग्रह है. इस ग्रह से संबंधित वृक्ष का नाम कुश घास (वनस्पति नाम *डेस्मोस्टैचिया बाइपिन्नेटा*) है.

नक्षत्र - विभिन्न नक्षत्रों से संबंधित वृक्षों के पौराणिक नाम, सामान्य नाम व वानस्पतिक नाम सारणी में दिये गये है. जातक को अपने जन्म नक्षत्र से अनुकुलित लाभ होने हेतु इन वृक्षों की सेवा करनी चाहिए. इन्हें नित्य प्रतिदिन जल सींचना चाहिए तथा इन्हें संरक्षण प्रदान करना चाहिए.

भारतीय संस्कृति मूलतः अरण्यक संस्कृति है. प्रकृति

राशि एवं वृक्ष

क्र.	राशि	वृक्ष	वैज्ञानिक नाम
1.	मेष - Aries	आँवला	फाइलेन्थरा एम्बीलीका
2.	वृषभ - Taurus	जामुन	सीनीजीयम क्यूमीनी
3.	मिथुन - Gemini	शीशम	डलबर्जिया शीशो
4.	कर्क - Cancer	पीपल	फाइकल रिलिजिओसा
5.	सिंह - Leo	ढाक (पलास)	ब्यूटिमा मोनोस्पर्मा
6.	कन्या - Virgo	रीठा	सेपेन्डस मुकोरोजी
7.	तुला - Libra	अर्जुन	टरमीनेलीया अर्जुना
8.	वृश्चिक - Scorpio	मोलश्री	मीमुसोटस इलेन्जी
9.	धनु - Saggitarius	वेतस	सेलिकस टेट्रास्पर्मा
10.	मकर - Capricorn	मदार (आक)	केलोट्रोपिस प्रोसेरा
11.	कुम्भ - Aquarius	कदम्ब	एन्थोसिफेलस चाइनेन्सीज
12.	मीन - Pisces	नीम	एजाडिरेक्टा इण्डिका

ग्रह वाटिका

क्र.	ग्रह	संस्कृत नाम	स्थानीय नाम	वैज्ञानिक नाम
1.	सूर्य	अर्क	आक	क़ेलोट्रोपिस प्रोसेरा
2.	चन्द्र	पलास	ढाक	ब्यूटिया मोनोस्पर्मा
3.	मंगल	खदिर	खैर	अकेसिया कटेचु
4.	बुध	टापामागें	चिड़िया	एकाइरेन्थस एस्पेरा
5.	बृहस्पति	पिप्पल	पीपल	फाइकस रिलिजिओसा
6.	शुक्र	औंडम्बर	गूलर	फाइकस ग्लोमेरा/फाइकन रेसीमोसा
7.	शनि	छयोकर	शामी/शमी	प्रोसोपिस सिनेरेरिया
8.	राहू	दूर्त्वा	दूब	साइनोडोन डेक्टाइलान
9.	केतु	कुश	कुश	डेस्मोस्टैचिया बाईपिन्नेटा

नक्षत्र वाटिका

क्र.	नक्षत्र	पौराणिक नाम	सामान्य नाम	वैज्ञानिक नाम
1.	अश्वनी नक्षत्र	कारस्कर	कुचला	स्ट्रीक्नोस नक्स-वमीका
2.	भरनी नक्षत्र	धात्री	आंवला	फाइलेन्थस एम्बलीका
3.	कृतिका नक्षत्र	उदुम्बर	गूलर	फाइकस रेसीमोसा
4.	रोहणी नक्षत्र	जम्बु	जामुन	साइजीयम क्यूमीनी
5.	मृगाशिरा नक्षत्र	खादिर	खैर	अकेसिया कटेचु
6.	आर्द्रा नक्षत्र	कृष्ण	शीशम	डलबर्जीया शीशो

की अराधना करना तथा पर्यावरण का संरक्षण करना हमारा पुरातन चिंतन है. अथर्ववेद में वनस्पतियों के द्वारा समस्त रोगों के शमन के उपाय बताये गये हैं. गीता में पीपल को अश्वस्त या वासुदेव वृक्ष कहा गया है. धार्मिक एवं मांगलिक अनुष्ठान व्रत, उत्सव यज्ञ आदि पवन वृक्षों की पूजा के बिना पूर्ण नहीं होते हैं. पीपल में विष्णु, लक्ष्मी व पितृदेव का, आवंला में लक्ष्मी का, बेलपत्र व रूद्राक्ष में भगवान शिव का अशोक के पेड़ में मन्द का, कदम्ब में वासुदेव श्रीकृष्ण का, बरगद व पलाश (ढांक) में ब्रह्माजी का, नीम में शीतला माता का निवास माना गया है. अतः धार्मिक आस्था को पर्यावरण संरक्षण से जोड़ा जाए तो विभिन्न पादप प्रजातियों को संरक्षण मिलेगा.

उपनिषद का कथन, 'रक्षय प्रकृति पातुं लोका' अर्थात 'मानव की रक्षा के लिए प्रकृति की रक्षा' जरूरी है.

सम्पर्क : **प्लॉट नं.389, गली नं.10,**
मिल्कमेन कोलोनी, पाल रोड, जोधपुर (राजस्थान),
एसोसिएट प्रोफेसर, नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त लेख

अंतरर्राष्ट्रीय प्रकाश और प्रकाश-आधारित प्रौद्योगिकियों का वर्ष-2015

- मनीष मोहन गोरे

प्रकाश के हमारे जीवन में महत्व को दृष्टिगत रखते हुए 20 दिसंबर 2013 के दिन संयुक्त राष्ट्र की आमसभा के 68वें सत्र में वर्ष 2015 को 'अतर्राष्ट्रीय प्रकाश तथा प्रकाश-आधारित प्रौद्योगिकियों का वर्ष' घोषित किया गया था. इस अंतर्राष्ट्रीय प्रकाश वर्ष संबंधी पहल के पीछे यूनेस्को सहित विश्व के असंख्य वैज्ञानिक, शैक्षिक, प्रौद्योगिकी निकायों, समाजसेवी संस्थाओं तथा निजी क्षेत्र के सहभागियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है.

अंतर्राष्ट्रीय प्रकाश वर्ष से संबंधित आधिकारिक बैनर व लोगो

प्रकाश जीवन का पर्याय : प्रकाश हमारे जीवन का एक अभिन्न हिस्सा है. कल्पना कीजिए कि अगर हमारी पृथ्वी पर सूर्य का प्रकाश इस उपयुक्त व प्राकृतिक तौर पर नहीं पहुंचता तो क्या यहां जीवन पनप पाता और क्या हम मानव, विभिन्न जंतु तथा वनस्पतियों का अस्तित्व होता. इसका जवाब 'ना' में है. वास्तव में प्रकाश है तो पृथ्वी पर जीवन है इसलिए प्रकाश को 'जीवन का पर्याय' कहना अतिश्योक्ति न होगी.

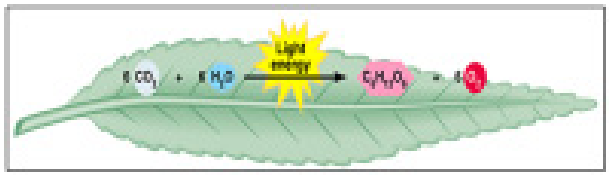

पौधे की पत्ती में होने वाली प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया का चित्रात्मक प्रतिरूपण

प्रकाश संश्लेषण : (photosynthesis) की नैसर्गिक प्रक्रिया में हरे पौधे सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में अपनी पत्तियों के हरे वर्णक पर्णहरिम (chlorophyll) में वायुमंडल से कार्बन डाइआक्साइड तथा जड़ों से पानी लेकर कार्बोहाइड्रेट का निर्माण करते हैं. यह कार्बोहाइड्रेट पृथ्वी की सभी खाद्य श्रृंखलाओ, क्विक फूड चेन के घटक जीवों की ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं. अगर गौर करें तो पृथ्वी पर जीवन का आधार यह प्रकाश-संश्लेषण क्रिया है और प्रकाश-संश्लेषण का आधार सूर्य का प्रकाश है. सूर्य का प्रकाश हमारी पृथ्वी पर ऊर्जा का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है. सूर्य का प्रकाश, प्रकाश संश्लेषण के अलावा हमें गर्म रखता है, इसके कारण मौसम का निर्माण होता है तथा दिन के समय इसकी उपस्थिति में हम अपने रास्तों का पता लगा पाते हैं.

सूर्य का प्रकाश

$$6CO_2 + 12\,H_2O \Rightarrow O\,C_6H_{12}O_6 + 6O_2 + 6H_2O$$

कार्बन डाइआक्साइड + पानी + पर्णहरिम + ग्लूकोज ऑक्सीजन + पानी

प्रकाश संश्लेषण से संबंधित समीकरण : प्रकाश हमारे दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और 21वीं सदी में प्रकाश ने विज्ञान व प्रौद्योगिकी से जुड़े असंख्य खोजों/आविष्कारों को उत्प्रेरित किया है. स्वास्थ्य, चिकित्सा, संचार आदि जैसे अहम क्षेत्रों में प्रकाश संबंधी प्रौद्योगिकियों ने क्रांति ला दीया है.

अंतर्राष्ट्रीय प्रकाश वर्ष 2015 का उद्देश्य : अंतर्राष्ट्रीय प्रकाश वर्ष 2015 का प्रमुख उद्देश्य है - स्थायी विकास को बढ़ावा देना और ऊर्जा, शिक्षा, कृषि तथा स्वास्थ्य के क्षेत्र में वैश्विक चुनौतियों के समाधान उपलब्ध कराने की दिशा में

प्रकाश आधारित प्रौद्योगिकियों की भूमिका को लेकर जन-जागरूकता फैलाना.

प्रकाश से जुड़ी महत्वपूर्ण खोजें और इसकी द्वैत प्रकृति : प्राचीन काल से प्रकाश को लेकर लोगों के मन में तरह-तरह के कौतूहल व्याप्त रहे हैं. प्रकाश की वैज्ञानिक अभिव्यक्ति के लिए बहुत पुराने समय से दार्शनिकों और वैज्ञानिकों ने समय-समय पर अपने विचार प्रस्तुत किए हैं. कुछ वैज्ञानिकों ने प्रकाश को कण माना तो कुछ ने तरंग. प्रकाश को लेकर यह द्वैत व्याख्या इसलिए सामने आई क्योंकि प्रकाश दो अलग-अलग प्रकार के व्यवहार प्रदर्शित करता है.

आइजक न्यूटन (1643-1727) का मत था कि प्रकाश कण है. 17वीं सदी में उन्होंने प्रकाश से जुड़े अनेक प्रयोग किए, जिसके बाद वह इस नतीजे पर पहुंचे थे. उनका प्रसिद्ध प्रयोग सूर्य के प्रकाश एवं प्रिज्म पर केंद्रित था जिसमें उन्होंने प्रतिपादित किया था कि श्वेत प्रकाश अनेक रंगों से मिलकर बनता है और प्रत्येक रंग को उपयोग कर श्वेत प्रकाश पुनः निर्मित नहीं किया जा सकता है तथा न ही किसी एक रंग के प्रकाश को और आगे विभक्त किया जा सकता है.

आइजक न्यूटन (1643-1727)

न्यूटन के मत से अलग हटकर कुछ वैज्ञानिकों (हाइगेन्स और रॉबर्ड हुक) ने कहा कि प्रकाश एक तरंग है. सन् 1800 में थॉमस यंग (1773-1829) नामक भौतिकशास्त्री ने अपने प्रयोगों के आधार पर यह बताया कि प्रकाश व्यतिकरण (interference) नामक भौतिक घटना को प्रकट कर सकता हैं. व्यतिकरण में तरंगों के शीर्ष (crest) और द्रोण (trough) घट-बढ़ कर प्रकाश में चमकदार तथा गहरी पट्टियों को प्रदर्शित करते हैं. यंग ने यह भी प्रतिपादित किया था कि प्रकाश के विभिन्न वर्णों के भिन्न-भिन्न तरंग दैर्ध्य होते हैं.

थॉमस यंग (1773-1829)

19वीं सदी में वैद्युतिकी और चुंबकत्व संबंधी विज्ञान की पराकाष्ठा भौतिकशास्त्री जेम्स क्लार्क मैक्सवेल (1831-1879) के सिद्धांत में दिखाई दी जिसमें उन्होंने कहा था कि प्रकाश दोलनकारी वैद्युत एवं चुंबकीय क्षेत्रों की तरंगें होनी चाहिए. इन तरंगों की गति प्रकाश की मापी गई गति के बहुत निकट पाई गई. इससे यह ज्ञात हुआ कि दृश्य प्रकाश एक विद्युत-चुंबकीय घटना है. वर्तमान समय में यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि प्रकाश विद्युत-चुंबकीय विकिरण की एक अति उच्च आवृत्ति होती है.

जेम्स क्लार्क मैक्सवेल

प्रकाश की तरंग प्रकृति संबंधी सिद्धांत की स्थापना के दौरान सन् 1905 में महान भौतिकशास्त्री अल्बर्ट आइन्सटीन (1879-1955) ने बताया कि प्रकाश-विद्युत प्रभाव की व्याख्या के लिए आवश्यक है कि प्रकाश पृथक बंडल (फोटॉन) में उत्पन्न हो. वर्तमान सुस्थापित धारणा के अनुसार प्रकाश की द्वैत प्रकृति होती है और यह कण तथा तरंग दोनों के गुण एवं व्यवहार प्रदर्शित करता है.

प्रकाश के स्रोत : प्रकाश से अभिप्राय है दृश्य प्रकाश और यह दृश्य प्रकाश समग्र विद्युत चुंबकीय वर्ण-क्रम का

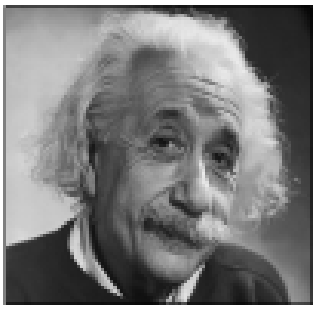

अल्बर्ट आइन्सटाइन (1879-1955)

महज एक छोटा हिस्सा होता है. इस दृश्य प्रकाश; (visible light) के एक छोर पर दीर्घ रेडियो तरंगें होती हैं तो दूसरे छोर पर लघु व अत्युच्च ऊर्जावान गामा किरणें.

साधारण शब्दों में दृश्य प्रकाश, विद्युत चुंबकीय विकिरण

के बंडलों (फोटानों) के रूप में मुक्त ऊर्जा होता है और इसे

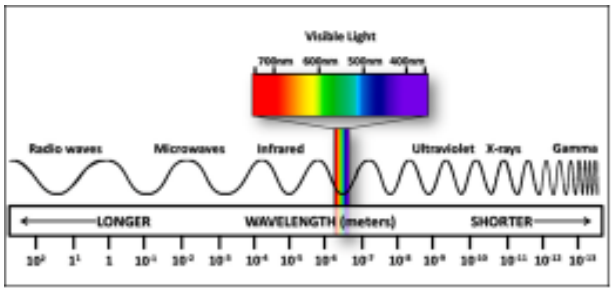

विद्युत चुंबकीय वर्ण-क्रम

ही हमारी आंखें प्रकाश के रूप में महसूस करती हैं. ये फोटान (ऊर्जा के बंडल) केवल तभी मुक्त होते हैं, जब परमाणुओं में आवेशित इलेक्ट्रॉन स्थिर कक्षाओं में लौटकर आते हैं. परमाणु स्तर पर होने वाली इस घटना के फलस्वरूप ऊर्जा मुक्त होती है.

जिस प्रकार लोहे की छड़ को ऊष्मा देने पर वह गर्म होती है और ऐसा लगातार करने पर उसका रंग बदलता जाता है. उसी तरह तापमान में वृद्धि होने पर प्रकाश के अदृश्य अवरक्त विकिरण उत्सर्जित होते हैं. तापमान में और अधिक वृद्धि करने पर प्रकाश का रंग लाल, नारंगी, पीला तथा अंत में चमकीले सफेद रंग में बदलता है.

हमारे घरों में प्रयोग होने वाले प्रकाश को अनेक विधियों से उत्पन्न किया जाता हैं. परंपरागत तेल के दीए और मोमबत्तियों की लौ में गर्म कार्बन कणों के द्वारा प्रकाश उत्पन्न होता है. सामान्य टंगस्टन बल्बों में गर्म टंगस्टन तंतु के द्वारा प्रकाश पैदा होता है जबकि प्रतिदीप्ति प्रकाश और सीएफएल में गैस व प्रतिदीप्ति के द्वारा विद्युत प्रवाह के कारण प्रकाश उत्पन्न होता है. लाइट इमिटिंग डायोड (एलईडी) में ठोस-अवस्था इलैक्ट्रॉनिक प्रक्रियाओं के द्वारा प्रकाश उत्पन्न होता है.

प्रकृति की सूक्ष्म से लेकर स्थूल रचनाओं को देखने के लिए प्रकाश को एक शक्तिशाली साधन के रूप में प्रयोग किया जाता है. जाहिर सी बात है कि हम मनुष्यों की आंखों की क्षमता से परे किसी वस्तु को देख पाना प्रकाश के कारण संभव हो पाया है. प्रकाशिक सूक्ष्मदर्शी (light microscope) से जहां एक तरफ हम अति सूक्ष्म रचनाओं को देखने में सक्षम हुए हैं, तो वहीं दूसरी ओर दूरबीनों (telescope) ने हमें सुदूर अंतरिक्ष पिंडों के प्रेक्षण के लिए काबिल बनाया है. ये दोनों उपकरण प्रकाश के सिद्धांत पर कार्य करते हैं.

प्रकाशिक सूक्ष्मदर्शी

दूरदर्शी

एडीसनः विश्व को प्रकाशित करने वाला आविष्कारक : कुछ वैज्ञानिकों के आविष्कार इतने महत्वपूर्ण होते हैं कि उनसे विश्व में एक क्रांतिकारी बदलाव आ जाता है. विद्युत बल्ब एक ऐसा ही आविष्कार है. जिसने समूचे विश्व को प्रकाशित कर दिया अन्यथा शायद हम आज भी दिन ढलते ही अंधकार में डूब जाते. बल्ब के इस अहम आविष्कार का श्रेय जाता है महान अमेरिकी आविष्कारक थॉमस अल्वा एडीसन (1847-1931) को. एडीसन ने विश्व को अनेक महत्वपूर्ण आविष्कार दिए हैं जिनमें मोशन पिक्चर कैमरा, फोनोग्राफ, प्रिंटिंग टेलीग्राफ, टाइपराइटिंग मशीन, गैल्वेनिक बैटरी, इलैक्ट्रिकल जेनरेटर तथा टेलीग्राफी आदि प्रमुख हैं. वह एक प्रखर आविष्कारक थे और उनके नाम से 1093 पेटेंट दर्ज हैं. विश्व में पहली औद्योगिक अनुसंधान प्रयोगशाला की स्थापना का श्रेय एडीसन को दिया जाता है.

बचपन में एक फिसड्डी विद्यार्थी और औपचारिक शिक्षा न लेने वाला यह व्यक्ति आगे चलकर एक महान आविष्कारक बना और जिसने विश्व को अनेक महत्वपूर्ण आविष्कारों की सौगात दी.

एडीसन ने पहले विद्युत प्रकाश बल्ब का नहीं बल्कि पहले व्यापारिक रूप से व्यावहारिक उद्दीप्त बल्ब का आविष्कार किया था. उन्होंने 1878 ई. में एडीसन इलेक्ट्रिक लाइट

थॉमस अल्वा एडीसन (1847-1931)

कंपनी की स्थापना न्यूयार्क शहर में की थी. 31 दिसंबर, 1879 को एडीसन ने मेनलो पार्क में अपने द्वारा बनाए गए उद्दीप्त प्रकाश बल्ब का सार्वजनिक प्रदर्शन किया और इस अवसर पर कहा था, 'मैं इतनी सस्ती बिजली बनाऊंगा कि केवल अमीर लोग ही मोमबत्ती जलाएंगे.

सम्पर्क : **विज्ञान प्रसार, ए-50-इंस्टिट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62, नोएडा-201309 (उ.प्र.)**

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त लेख

लोगों को मौत के मुंह से वापस लाने का जुनून

उत्तम सिंह गहरवार

क्या मरीज के शरीर में खून की जगह ठंडे नमकीन पानी के प्रवाह से उसे मौत के मुंह से वापस लाया जा सकता है? यूनिवर्सिटी ऑफ एरिजोना (ट्यूसौन) के पीटर री का तो यही दावा है. वो कहते हैं, 'जब आपके शरीर का तापमान 10 डिग्री सेल्सियस हो, दिमाग सुन्न पड़ गया हो, धड़कन बंद हो गई हो - तो हर कोई मानेगा कि आप मर गए हैं, लेकिन हम आपको मौत के मुंह से वापस ला सकते हैं.'

पिट्सबर्ग बढ़ा-चढ़ाकर यह नहीं बोल रहे हैं. यूनिवर्सिटी ऑफ मेरीलैंड के सैमुअल तिशरमैन के साथ उन्होंने दिखाया है कि शरीर को कई घंटों तक ऐसी स्थिति में रखना संभव है. प्रस्तुत है इस सम्बन्ध में विस्तृत रिपोर्ट : -

सस्पेंडेड एनिमेशन : फिलहाल इस प्रक्रिया का इस्तेमाल जानवरों पर किया गया है और चिकित्सा क्षेत्र में ये क्रांतिकारी प्रक्रिया है. इसमें शरीर से सारा खून निकालकर उसे सामान्य तापक्रम से 20 डिग्री सेल्सियस नीचे तक ठंडा किया जाता है. एक बार चोट सही होने पर, खून को दोबारा नसों के सहारे शरीर में पहुंचा दिया जाता है और शरीर धीरे-धीरे गर्म होने लगता है. जैसे ही खून पहुंचने लगता है शरीर का रंग गुलाबी होना शुरू हो जाता है. तीस डिग्री तापमान पर दिल एक बार धड़का. और फिर जैसे ही शरीर और गर्म होता है, दिल खुद से धड़कने लगता है.

वैज्ञानिक तिशरमैन कहते हैं, 'इस प्रयोग में जानवर कुछ समय तक बेहोशी जैसी स्थिति में होते हैं, लेकिन एक दिन के बाद सामान्य हो जाते हैं. सचेत हो जाने पर ऐसा नहीं दिखता कि जानवर पर इस प्रयोग का कोई खास बुरा असर हुआ हो.'

मनुष्यों पर प्रयोग : तिशरमैन तब सुर्खियों में आए थे, जब उन्होंने घोषणा की थी कि वे पिट्सबर्ग में गोली से बुरी तरह घायल एक व्यक्ति पर यह तकनीक आजमाने के लिए तैयार हैं. उनका कहना था कि ये प्रयोग उसी मरीज पर होगा, जो इतनी बुरी तरह घायल हो कि उसका दिल धड़कना बंद हो गया होगा, मतलब ये प्रयोग ही उसकी आखिरी उम्मीद हो.

तब सीएनएन समाचार चैनल की सुर्खी थी "सस्पेंडेड एनिमेशन से मौत को धोखा" और न्यूयार्क टाइम्स की हेडलाइन थी, "मरीज को बचाने के लिए पहले उसे मारना."

मीडिया की इन खबरों से तिशरमैन कुछ नाराज थे. वे कहते हैं, "लोगों के लिए यह समझना जरूरी है कि ये साइंस फिक्शन नहीं है. यह प्रयोगों पर आधारित है. इसे इस्तेमाल करने से पहले इसके बारे में अनुशासित अध्ययन किया गया है." लोगों को मौत के मुंह से वापस खींच लाने की तिशरमैन की इच्छा 1960 के दशक में ही दिखने लगी थी जब वह मेडिकल की पढ़ाई कर रहे थे और उनके गुरू थे पीटर साफार.

धड़कन लौटने की संभावना : 1960 के दशक में पीटर साफार ने ही सीपीआर तकनीक के बारे मे बताया था, जिसके तहत दिल की धड़कन अचानक रुकने पर दिल पर दबाव डालने से धड़कन वापस आने की संभावना रहती है.

दिल के दौरे के बाद आक्सीजन की कमी से शरीर के अहम अंगों को गंभीर नुकसान हो सकता है. तिशरमैन कहते हैं, 'अगर अंगों को ऑक्सीजन नहीं मिलता है, तो वो मरने लगते हैं.' लेकिन गंभीर दुर्घटनाओं के बाद पड़ने वाले दिल के दौरों में सर्जन के पास सबसे अच्छा विकल्प शरीर के निचले हिस्से की धमनियों को बांध देना होता है.

इसके बाद डॉक्टर छाती को खोलते हैं और दिल की मालिश करते हैं. इससे दिमाग में खून का संचार होता रहता है और डॉक्टरों को चोट की सर्जरी का मौका मिल जाता है. दुर्भाग्यवश ऐसे मामलों में मरीज का जीवन बचने की संभावना

10 में से एक से भी कम है. यही वजह है कि तिशरमैन शरीर को 10 से 15 डिग्री सेल्सियस पर लाना चाहते हैं, ताकि चिकित्सकों को आपरेशन के लिए दो या इससे अधिक घंटे मिल जाएं.

हाइपोथर्मिया : हालांकि डीप हाइपोथर्मिया की यह अवस्था अब भी दिल की कुछेक सर्जरी में ही इस्तेमाल होती है. लेकिन तिशरमैन इस प्रयोग को उस मरीज पर करना चाहते हैं जो अस्पताल आने से पहले ही "मर" चुका हो. शायद, सबसे चौकाने वाली बात तो ये है, कि उनकी टीम मरीज के शरीर से पूरा खून निकाल लेती है और इसमें ठंडा सलाइन सॉल्यूशंस भर देती है. चूंकि शरीर का मेटाबालिज्म (चयापचय क्रिया) रुक जाता है, इसलिए कोशिकाओं को जिंदा रखने के लिए खून की जरूरत नहीं होती.

यह कहने की जरूरत नहीं कि मनुष्यों पर इसके परीक्षण की मंजूरी मिलना बहुत मुश्किल था. तिशरमैन को इस साल की शुरुआत में गोली से घायल लोगों पर परीक्षण करने की मंजूरी मिली.

पीट्सबर्ग के अस्पताल में महीने में एक-दो मामले ऐसे आते हैं यानि कि मनुष्यों पर प्रयोग का सिलसिला तो शुरू हो ही गया है, हालाँकि तिशरमैन फिलहाल इसके नतीजों पर बात नहीं कर सकते हैं. तिशरमैन अब बाल्टीमोर में भी परीक्षण शुरू करने की योजना बना रहे हैं. इसी तरह से री भी ट्यूसौन में ट्रामा सेंटर बनाना चाहते हैं.

चुनौतियां : जैसा कि किसी भी मेडिकल रिसर्च में होता है, जानवरों के बाद मनुष्यों पर परीक्षण करने की अपनी चुनौतियां होती हैं. आपरेशन के बाद जानवरों को उनका खून वापस दे दिया जाता है, जबकि मनुष्यों के मामले में ट्रांसफ्यूजन के जरिए ब्लड बैंक से खून दिया जाएगा. जानवर को चोट के समय एनेस्थेसिया दिया जाता है, जबकि मनुष्यों के मामले में ये नहीं होगा.

अगर इन प्रयोगों में सफलता मिली तो **सस्पेंडेड एनिमेशन** के तरीके को और गंभीर चोटों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है. कुछ वैज्ञानिकों का तो यह भी ख्याल है कि सलाइन साल्यूशंस में अगर कुछ दवाइयां मिला दी जाएं तो क्या शरीर को आगे होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है.

सम्पर्क : **205, मुख्य मार्ग, समता कालोनी, रायपुर (छत्तीसगढ़)**

मुंबई के स्कूलों के लिए विज्ञान प्रश्न मंच प्रतियोगिता

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, गत कई वर्षों से परमाणु ऊर्जा विभाग के देश भर में स्थित सभी 30 विद्यालयों के कक्षा 10 के छात्रों के लिये कंप्यूटरीकृत विज्ञान प्रश्न मंच प्रतियोगिता आयोजित करती आ रही है. इन विद्यालयों को चार क्षेत्रों में बांटकर प्रायः अगस्त में एक ही दिन, एक ही समय चारों क्षेत्रों में क्षेत्रीय प्रश्न मंच प्रतियोगिता, परिषद की चार टीमों द्वारा आयोजित की जाती है. जिसमें सभी स्कूलों से एक-एक टीम प्रतिभागी होती है. इन चारों क्षेत्रों से विजयी एक एक टीम का फाइनल राउंड भाभा परमाणु अनुसन्धान केंद्र, मुंबई में प्रायः नवंबर में आयोजित किया जाता है. जिसमें परमाणु ऊर्जा विभाग के मुंबई स्थित सभी स्कूलों के कक्षा 9 के लगभग 600 विद्यार्थी दर्शक होते हैं. हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की स्थापना के स्वर्ण जयंती वर्ष में 2 नये कार्यक्रमों - स्वर्ण जयंती संगोष्ठी एवं प्रश्न मंच (मुंबई के स्कूलों के लिये) आयोजन का अनुमोदन लिया गया है. परिषद की कार्यकारिणी समिति ने यह निर्णय लिया गया कि मुंबई के सभी स्कूलों के लिए विज्ञान प्रश्नमंच प्रतियोगिता आरंभ की जाये.

- कुलवंत सिंह
सचिव,हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त लेख

जल-वायु प्रदूषण के कारण और बचने के उपाय'

डॉ.सरोज शुक्ला

पर्यावरण शब्द दो शब्दों परि+आवरण से मिलकर बना है जिसका अर्थ परि-चारों ओर, आवरण-घेरा, यानि हमें चारों ओर से घेरने वाला पर्यावरण ही है. प्राचीन काल में मानव बहुत सीधा-सादा जीवन व्यतीत करता था, उस समय पर्यावरण के बारे में इतना सब नहीं समझता था, लेकिन मानव ने जब से उत्पादन-क्षमता बढ़ाई है, विश्व में पर्यावरण की एक नई समस्या उभरकर सामने आई है. मनुष्य ने पर्यावरण को जब तक अपने हिस्सेदार की तरह समझकर अनुकूल रखा तो लाभ भी लिया. लेकिन जब से मानव ने पर्यावरण के साथ अल्पावधि लाभ हेतु इसके साथ छेड़छाड़ की और अदूरदर्शिता से प्राकृतिक सम्पदाओं का उपयोग किया और उसे नष्ट किया है तभी से वातावरण में अवांछित परिवर्तन हुए जिसके बारे में मानव ने कभी सोचा नहीं और यह हानि उठानी पड़ी है.

मानव ने बिना सोच-विचार के अपनी सुविधा हेतु मोटर-वाहनों का प्रयोग, औद्योगीकरण, कृषि, जनसंख्या वृद्धि, बढ़ती आवश्यकताएं, वनों की कटाई, वन्य जीवों का शिकार, प्लास्टिक उद्योग, परमाणु परीक्षण आदि से वातावरण में अनचाहे परिवर्तन हुए हैं और हमारी भूमि, जल व वायु के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में ऐसा परिवर्तन हुआ है जो कि पूरी मानव सभ्यता के लिए अलाभकारी सिद्ध हुआ है. आज यदि हम पर्यावरण की सच्चाई से जांच करें तो हमें सच का पता लग जायेगा कि मनुष्य ने जिस गति से मशीनीकरण के युग में पैर रखा है तभी से हमारे वातावरण पर बुरा प्रभाव दृष्टिगोचर होने लगा. हमारा देश भारत जहां पुराने समय में प्रकृति का स्वच्छ स्थान माना जाता था साथ ही प्रकृति की हम पर अपार कृपा थी. यहां पर पेड़-पौधे, वन्य जीव काफी संख्या में पाए जाते थे. वनों का क्षेत्रफल भी अधिक था लेकिन मानव ने अपने स्वार्थ से वशीभूत होकर अपने हाथों से जिस बेरहमी से प्रकृति को नष्ट किया है उसी से प्रदूषण की गंभीर समस्या उत्पन्न हुई है. मानव के क्षणिक लाभ के आगे हमारी पवित्र गंगा-यमुना नदी भी नहीं बच पायी. अतः कहा जा सकता है कि मानव जिस तरह से प्रकृति या पर्यावरण के ऊपर अपने क्रूर हाथ चला रहा हैं, उससे प्रकृति तो नष्ट हुई ही है, परन्तु मानव भी सुरक्षित नहीं रह सका है. मानव ने अपने क्रूर हाथों से अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारी है. यह सच है कि मानव जीवन हेतु साफ-सुथरा पर्यावरण अति आवश्यक है और पर्यावरण प्रकृति का अनुशासन है, जब यह अनुशासन भंग होगा तो सन्तुलन बिगड़ेगा और सन्तुलन बिगड़ने पर प्रदूषण उत्पन्न होगा.

प्रदूषण : पर्यावरण के अंगों जल, थल, नभ, वायु आदि में ऐसा परिवर्तन जो कि उपरोक्त अंगों के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों को परिवर्तित कर दे, प्रदूषण कहलाता है. प्रदूषण निम्न प्रकार के होते हैं -

1. **वायु प्रदूषण,**
2. **जल प्रदूषण,**
3. **भू प्रदूषण या थल प्रदूषण,**
4. **ध्वनि प्रदूषण**

इसमें से वायु और जल प्रदूषण मुख्य रूप से हैं

वायु प्रदूषण : वायुमण्डल पर्यावरण का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है. मानव जीवन के लिए वायु का होना अति आवश्यक है. वायुरहित स्थान पर मानव जीवन की कल्पना करना भी बेकार है क्योंकि मानव वायु के बिना 5-6 मिनट से अधिक जिन्दा नहीं रह सकता. एक मनुष्य दिन भर में औसतन 20 हजार बार श्वास लेता है. इसी श्वास के दौरान मानव 35 पौण्ड वायु का प्रयोग करता है. यदि यह प्राण देने वाली वायु

शुद्ध नहीं होगी तो यह प्राण देने के बजाय प्राण ही लेगी.

पुराने समय में मानव के आगे वायु प्रदूषण जैसी समस्या सामने नहीं आई क्योंकि प्रदूषण का दायरा सीमित था साथ ही प्रकृति भी पर्यावरण को संतुलित रखने का लगातार प्रयास करती रही. उस समय प्रदूषण सीमित होने के कारण प्रकृति ही संतुलित कर देती थी लेकिन आज मानव विकास के पथ पर अग्रसर है और उत्पादन क्षमता बढ़ा रहा है. मानव ने अपने औद्योगिक लाभ हेतु बिना सोचे-समझे प्राकृतिक साधनों को नष्ट किया जिससे प्राकृतिक सन्तुलन बिगड़ने लगा और वायुमंडल भी इससे न बच सका. वायु प्रदूषण प्राकृतिक साधनों का अधिक उपयोग किया है. औद्योगीकरण से बड़े-बड़े शहर बंजर बनते जा रहे हैं. इन शहरों व नगरों की जनसंख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, इससे शहरों व नगरों में आवास-समस्या उत्पन्न हो गई है. इस आवास-समस्या को सुलझाने के लिए लोगों ने बस्तियों का निर्माण किया और वहां पर जलनिकासी, नालियों आदि की समुचित व्यवस्था नहीं होने से गन्दी बस्तियों ने वायुप्रदूषण को बढ़ावा दिया है. उद्योगों से निकलने वाला धुआँ, कृषि में रासायनों के उपयोग से भी वायु प्रदूषण बढ़ा है. साथ ही कारखानों की दुर्घटना भी भयंकर होती है. भोपाल में यूनियन

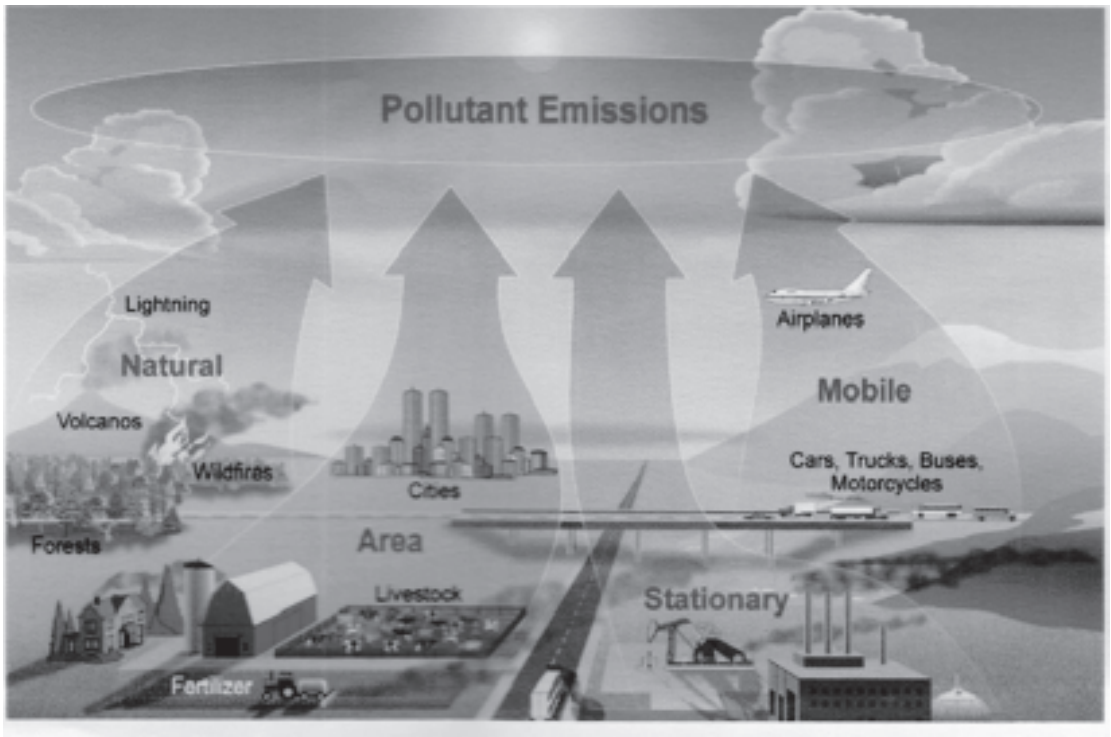

वायू-प्रदूषण

केवल भारत की समस्या हो ऐसी बात नहीं, आज विश्व की अधिकांश जनसंख्या इसकी चपेट में है. हमारे वायुमण्डल में नाइट्रोजन, आक्सीजन, कार्बन डाई आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड आदि गैस एक निश्चित अनुपात में उपस्थित रहते हैं. यदि इनके अनुपात के सन्तुलन में परिवर्तन होते हैं तो वायुमण्डल अशुद्ध हो जाता है, इसे अशुद्ध करने वाले प्रदूषण कार्बन डाई आक्साइड, कार्बन मोना-आक्साइड, नाइट्रोजन आक्साइड, हाइड्रोकार्बन, धूल मिट्टी के कण आदि हैं जो वायुमण्डल को प्रदूषित करते हैं.

वायु प्रदूषण के कारण : विश्व की बढ़ती जनसंख्या ने कार्बाइड कारखाने की दुर्घटना वर्षों की बड़ी दुर्घटना थी जिससे एक ही समय हजारों व्यक्तियों को असमय मरना पड़ा था और जो जिन्दा रहे वो भी विकलांग और विकृत होकर इस दुर्घटना या गैस त्रासदी के शिकार हैं.

आवागमन के साधनों की वृद्धि आज बहुत अधिक हो रही है. इन साधनों की वृद्धि में इंजनो, बसों, वायुयानों, स्कूटरों आदि की संख्या बहुत बढ़ी है. इन वाहनों से निकलने वाले धुएँ वायुमण्डल में लगातार मिलते जा रहे हैं जिससे वायुमण्डल में असन्तुलन हो रहा है. वनों की कटाई से वायु प्रदूषण बढ़ा है, क्योंकि वृक्ष वायुमण्डल के प्रदूषण को निरन्तर कम करते हैं. पौधे हानिकारक प्रदूषण गैस कार्बन डाई

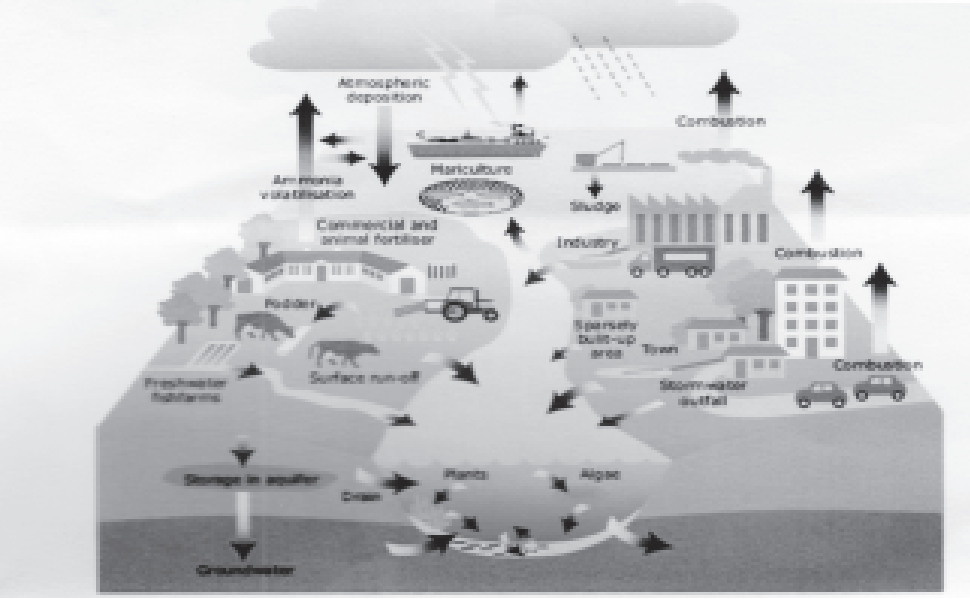

जल प्रदूषण

आक्साइड को अपने भोजन के लिए ग्रहण करते हैं और जीवनदायिनी गैस आक्सीजन प्रदान करते हैं. लेकिन मानव ने आवासीय एवं कृषि सुविधा हेतु इनकी अन्धाधुन्ध कटाई की है और हरे पौधों की कमी होने से वातावरण को शुद्ध करने वाली क्रिया जो प्रकृति चलाती है. कम हो गई है. परमाणु परीक्षण से नाभिकीय कण वायुमण्डल में फैलते हैं जो कि वनस्पति व प्राणियों पर घातक प्रभाव डालते हैं.

वायु प्रदूषण के प्रभाव : 1. यदि वायुमण्डल में लगातार अवांछित रूप से कार्बन डाइ आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड, नाइट्रोजन आक्साइड, हाइड्रोकार्बन आदि मिलते रहें, तो स्वाभाविक है कि ऐसे प्रदूषित वातावरण में श्वास लेने से श्वसन सम्बन्धी बीमारियां होंगी, साथ ही उल्टी घुटन, सिर दर्द, आँखों में जलन आदि बीमारियां होनी सामान्य बात है.

2. वाहनों व कारखानों से निकलने वाले धुएं में सल्फर डाइ आक्साइड की मात्रा होती है, जो कि पहले सल्फाइड व बाद में सल्फ्यूरिक अम्ल (गंधक का अम्ल) में परिवर्तित होकर वायु में बूंदो के रूप में रहती है. वर्षा के दिनों में यह वर्षा के पानी के साथ पृथ्वी पर गिरती है, जिससे भूमि की अम्लता बढ़ती है और उत्पादन-क्षमता कम हो जाती है. साथ ही सल्फर डाइ आक्साइड से दमा रोग हो जाता है.

3. कुछ रासायनिक गैसें वायुमण्डल में पहुंच कर वहां ओजोन मण्डल से क्रिया कर उसकी मात्रा को कम करती हैं. ओजोन मण्डल अन्तरिक्ष से आने वाले हानिकारक विकिरणों को अवशोषित करती है. हमारे लिए ओजोन मण्डल ढाल का काम करता है, लेकिन जब ओजोन मण्डल की कमी होगी तब त्वचा कैंसर जैसे भयंकर रोग से ग्रस्त हो सकती है.

4. वायु प्रदूषण से भवनों, धातु व स्मारकों आदि का क्षय होता है. ताजमहल को खतरा मथुरा तेल शोधक कारखाने से हुआ है.

5. वायुमण्डल में आक्सीजन का स्तर कम होना भी प्राणियों के लिए घातक है क्योंकि आक्सीजन की कमी से प्राणियों को श्वसन में बाधा आयेगी.

6. कारखानों से निकलने के बाद रासायनिक पदार्थ व गैसों का अवशोषण फसलों, वृक्षों आदि पर करने से प्राणियों पर बुरा प्रभाव पड़ेगा.

वायु प्रदूषण को नियन्त्रित करने के उपाय : 1. कारखानों को शहरी क्षेत्र से दूर स्थापित करना चाहिए, साथ ही ऐसी तकनीक उपयोग में लाने के लिए बाध्य करना चाहिए जिससे कि धुएं का अधिकतर भाग अवशोषित हो और अवशिष्ट पदार्थ व गैसें अधिक मात्रा में वायु में न मिलने पायें.

2. जनसंख्या शिक्षा की उचित व्यवस्था की जाए ताकि जनसंख्या वृद्धि को बढ़ने से रोका जाए.

3. शहरीकरण की प्रक्रिया को रोकने के लिए गांवों व कस्बों में ही रोजगार व कुटीर उद्योगों व अन्य सुविधाओं को उपलब्ध कराना चाहिए.

4. वाहनों में ईंधन से निकलने वाले धुएं को ऐसे समायोजित,

करना होगा, जिससे कि कम से कम धुआँ बाहर निकले.

5. निर्धूम चूल्हे व सौर ऊर्जा की तकनीक को प्रोत्साहित करना चाहिए.

6. ऐसे ईंधन के उपयोग की सलाह दी जाए जिसके उपयोग करने से उसका पूर्ण आक्सीकरण हो जाये व धुआँ कम से कम निकले.

7. वनों की हो रही अन्धाधुन्ध अनियंत्रित कटाई को रोका जाना चाहिए. इस कार्य में सरकार के साथ-साथ स्वयंसेवी संस्थाएं व प्रत्येक मानव को चाहिए कि वनों को नष्ट होने से रोके व वृक्षारोपण कार्यक्रम में भाग ले.

8. शहरों-नगरों में अवशिष्ट पदार्थों के निष्कासन हेतु सीवरेज सभी जगह होनी चाहिए.

9. इसको पाठ्यक्रम में शामिल कर बच्चों में इसके प्रति चेतना जागृत की जानी चाहिए.

10. वायु प्रदूषण की जानकारी व इससे होने वाली हानियों के प्रति मानव समाज को सचेत करने हेतु दूरदर्शन, रेडियो पत्र-पत्रिकाओं आदि के माध्यम से प्रचार करना चाहिए.

जल प्रदूषण : जल भी पर्यावरण का अभिन्न अंग है. एवं मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है. मानव स्वास्थ्य के लिए स्वच्छ जल का होना नितांत आवश्यक है. जल की अनुपस्थिति में मानव कुछ दिन ही जिन्दा रह पाता है, क्योंकि मानव शरीर का एक बड़ा हिस्सा जल होता है. अतः स्वच्छ जल के अभाव में किसी प्राणी के जीवन की क्या, किसी सभ्यता की कल्पना भी नहीं की जा सकती है. यह सब आज मानव को मालूम होते हुए भी जल-स्त्रोतों में ऐसे पदार्थ मिला रहा है, जिसके मिलने से जल प्रदूषित हो रहा है.

जल प्रदूषण के कारण : 1. औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप आज कारखानों की संख्या में वृद्धि हुई है, लेकिन इन कारखानों को लगाने से पूर्व इनके अवशिष्ट पदार्थों को नदियों, नहरों, तालाबों आदि किसी अन्य स्त्रोतों में बहा दिया जाता है, जिससे जल में रहने वाले जीव-जन्तुओं व पौधों पर तो बुरा प्रभाव पड़ता ही है साथ ही जल पीने योग्य नहीं रहता और प्रदूषित हो जाता है.

2. जनसंख्या वृद्धि से मलमूत्र हटाने की एक गंभीर समस्या का समाधान नासमझी में यह किया गया कि मल-मूत्र को आज नदियों व नहरों आदि में बहा दिया जाता है, यही मूत्र व मल हमारे जल स्त्रोतों को दूषित कर रहे हैं.

3. गांव में लोगों के तालाबों, नहरों में नहाने, कपड़े धोने, पशुओं को नहलाने बर्तन साफ करने आदि से भी ये जल स्त्रोत दूषित होते हैं.

4. कुछ नगरों में जो कि नदी के किनारे बसे हैं वहां पर व्यक्ति के मरने के बाद उसका शव पानी में बहा दिया जाता है. इस शव के सड़ने व गलने से पानी में जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है, जल सड़ांध देता है और जल प्रदूषित होता है.

जल प्रदूषण के प्रभाव : 1. प्रदूषित जल पीने से मानव में हैजा, पेचिस, क्षय, उदर संबंधी आदि रोग उत्पन्न होते हैं.

2. दूषित जल के साथ ही गोलकृमि, फीताकृति आदि मानव शरीर में पहुंचते हैं जिससे व्यक्ति रोगग्रस्त होता है.

3. जल में कारखानों से मिलने वाले अवशिष्ट पदार्थ, गर्म जल, जल स्त्रोत को दूषित करने के साथ-साथ वहां के वातावरण को भी गर्म करते हैं जिससे वहां की वनस्पति व जन्तुओं की संख्या कम होगी और जलीय पर्यावरण असन्तुलित हो जायेगा.

4. स्वच्छ जल जो कि सभी सजीवों को अति आवश्यक मात्रा में चाहिए, इसकी कमी हो जायेगी.

जल प्रदूषण से बचने के उपाय : 1. कारखानों व औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले अवशिष्ट पदार्थों के निष्पादन की समुचित व्यवस्था के साथ-साथ इन अवशिष्ट पदार्थों को निष्पादन से पूर्व दोषरहित किया जाना चाहिए.

2. नदी या अन्य किसी जल स्त्रोत में अवशिष्ट बहाना या डालना गैरकानूनी घोषित कर प्रभावी कानूनी कदम उठाने चाहिए.

3. कार्बनिक पदार्थों के निष्पादन से पूर्व उनका आक्सीकरण कर दिया जाए.

4. पानी में जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए रासायनिक पदार्थ, जैसे ब्लीचिंग पाउडर आदि का प्रयोग करना चाहिए.

5. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समुद्रों में किये जा रहे परमाणु परीक्षणों पर रोक लगानी चाहिए.

6. समाज व जन साधारण में जल प्रदूषण के खतरे के प्रति चेतना उत्पन्न करनी चाहिए.

जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण आदि ने हमारे जल स्त्रोतों को प्रदूषित किया है जिसका ज्वलंत प्रमाण है कि हमारी पवित्र पावन गंगा नदी जिसका जल कई वर्षों तक रखने पर भी स्वच्छ व निर्मल रहता था, लेकिन आज यही पावन नदी गंगा क्या कई नदियां व जल स्त्रोत प्रदूषित हो रहे हैं. यदि हमें मानव सभ्यता को जल प्रदूषण के खतरों से बचाना है, तो इस प्राकृतिक संसाधन को प्रदूषित होने से रोकना नितांत आवश्यक है, वर्ना जल प्रदूषण से होने वाले खतरे मानव सभ्यता के लिए खतरा बन जायेंगे.

सम्पर्क : **628, के.ए./94 कुमांचल नगर, सीमैप के पास, इंदिरा नगर, लखनऊ-226015**

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त लेख

शैशव काल में दूध में विषाक्त रसायनों का खतरा

-ललित कुमार सिंघानिया

इस वक्त जब हवा, पानी और जमीन भी जहरीली हो चुकी है, खाद्य पदार्थ भी जहरीले हो गए हैं. गाय के दूध में एक तरफ मिलावट की बात है, तो नकली दूध का भारी विस्तार हो चुका है. वहीं गाय के दूध में विदेशों में विषाक्त रसायनों के पाए जाने की अनेक बार पुष्टि हुई है. उस वक्त यह भी जांच का बिन्दु हो गया है कि क्या माताओं के स्तन से बच्चों को पिलाया जाने वाला दूध भी अब सुरक्षित है या नहीं? सर्वश्री रूथ एम. हफीज एवं शरान ए. टेलर के अनुसार 1970 एवं 1980 के दशक में मातृ स्तन से पोषण में विश्व स्तर पर काफी वृद्धि हुई, जहां 1960 के दशक में अस्पताल में जचकी कराकर बाहर जा रही 25 प्रतिशत महिलाएं स्तनपान कराती थीं, वहां 1980 तक यह बढ़कर 60 प्रतिशत हो चुका था.

स्तनपान से बच्चे के साथ भावनात्मक लगाव के अलावा भी अनेक फायदे हैं. इससे उत्कृष्ट पोषण मिलता है. किसी भी तरह के संक्रमण (इंफेक्शन) से सुरक्षा मिलती है. बच्चे की रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है. माता को गर्भ निरोधन का समय मिलता है. इसके अलावा कृत्रिम दूध का क्रय करने का अर्थ भार भी मां पर नहीं पड़ता.

किन्तु शिशु आहार विक्रेता कम्पनियों के जबरदस्त विज्ञापन एवं प्रचार के कारण स्तन पोषण में काफी गिरावट आई थी. विकासशील देशों में भी स्तनपान की जगह बोतल से दुग्धपान का प्रचलन तेजी से बढ़ा था. परिणामस्वरूप गरीब परिवारों पर इसका काफी अधिक भार बढ़ा था. साथ ही बोतल से दूध पिलाने (बॉटल फीडिंग) के गहरे दुष्प्रभावों में ऐसे दुखद दुष्प्रभाव भी बढ़े, जिनको स्तनपान से रोका जा सकता था; यथा- बाल डायरिया (पेचिस-दस्त), कुपोषण, इंफेक्शन में वृद्धि, इन बीमारियों के फलस्वरूप बाल मृत्यु.

फलस्वरूप बॉटल फीडिंग के स्थान पर स्तनपान ही बाल्य पोषण के लिए सुरक्षित विकल्प था और है. किन्तु, चिंता की बात यह है कि खाद्य उत्पादन प्रणाली में बढ़ते कीटनाशक, रोगनाशकों के प्रयोग से मां के दूध में भी इनके अंश का पाया जाना है. अनेकों प्रकार के रोगनाशी रसायन यथा क़्लोरडेन, हेप्टाक्लोर, डी.डी.टी., डी.डी.ई. एवं आर्गनो हैलोजन कंपाउंड, पर्यावरण में जैव विघटित नहीं होते. अपितु, ये मानव की वसा में जैव संकेन्द्रित हो जाते हैं, जो कि खाद्य प्रणाली में सर्वप्रथम आहार है.

किन्तु मां के स्तनपान के दूध पर आश्रित बच्चे पर ये रसायन और भी ज्यादा दुष्प्रभाव डालते हैं. 1960 के दशक में मां के दूध में कीटनाशकों के पाए जाने पर अमेरिका में बहुत बवाल मचा था. 1978 में अमेरिका में प्रकाशित रिपोर्टों में "ईलानाय" राज्य में गौ दुग्ध के 96 प्रतिशत नमूनों में डाए-एल्ड्रिन, 93 प्रतिशत नमूनों में हेप्टाक्लोर एपाक्साइड, 73 प्रतिशत नमूनों में लिडेन, 69 प्रतिशत नमूनों में क्लोडेन एवं 48 प्रतिशत नमूनों में डी.डी.टी. के अवशेष पाए गए थे.

चूंकि, गाय के दूध में कीटनाशकों का संदूषण (पी पी एम) मात्रा में पाया गया था, इसलिए मां के दूध में भी इसके संदूषण की जांच किए जाने हेतु उत्सुकता वैज्ञानिकों में जागृत हुई. सबसे पहले वर्ष 1951 में पहली 32 काली महिलाओं में वाशिंगटन डीसी में दुग्ध परीक्षण पर 0.13 पार्टस् प्रति मिलियन डी.डी.टी. का स्तर पाया गया. दस वर्षो के उपरांत कैलीफोर्निया के एक छोटे से सर्वेक्षण में डी.डी.टी. का 0.12 पी पी एम तथा डी.डी.ई. की मात्रा 0.25 पीपीएम पाई गई. 1981 के पूर्व मुख्यतया डी.डी.टी. की विषाक्तता पर ही परीक्षण किए जाते रहे.

वर्ष 1981 में किए गए अमेरिका के राष्ट्रीय सर्वेक्षण में 1400 माताओं के दूध में पर्याप्त मात्रा में डाय-एल्ड्रिन, हेप्टाक्लोर एपाक्साइड, आक्सीक्लोरडेन इत्यादि पाया गया.

तदुपरांत किए गए लगभग सभी अध्ययनों में पाया गया कि बच्चों को स्तनपान करा रही सभी माताओं में इस प्रकार के कीटनाशक/रोगनाशक मां के दूध में उपलब्ध हैं.

मां के दूध में यह विषाक्तता आती कहां से है? मानव शरीर में मां एक लीटर तक दूध प्रतिदिन बना सकती है. यह एक अत्यंत जटिल अंग एवं जटिल प्रक्रिया है, जिसमें रसायनों की संरचना भी होती है और निष्कर्षण भी होता है. दूध में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, खनिज, विटामिन, हारमोन तथा एंटीबाडी होते है. दूध में उपलब्ध वसा पानी में तैरती बूंदों की तरह होता है, जो कि इमल्सन रूप में एक सेमी परमीएबल मेंब्रेन से ब्लड प्लाज्मा (रक्त प्लाज्मा) से अलग रहती है. ये विषाक्त रसायन दूध में प्रोटीन के साथ मिलकर निष्कर्षित हो सकते हैं या दुग्ध वसा के साथ चिपककर आ सकते हैं या दुग्ध वसा कणों को पूरी तरह संदूषित कर उपलब्ध हो सकते हैं.

डी.डी.टी. एवं क्लोरडेन जैसे आर्गेनोक्लोरीन, विषैले रसायन वसा में घुलनशील होने के कारण मानव शरीर की वसा में लम्बे समय तक यथावत रह सकते हैं. मां के दुग्धपान काल में शारीरिक वसा के संवाहन (प्रवाह) और आवाजाही बढ़ने के कारण वसा में घुले रसायनों का संवाहन भी बढ़ जाता है. फलस्वरूप दुग्ध काल में मां के दुग्ध के साथ ये "वसा घुलनशील रसायन" दूध के साथ आ जाते हैं. फलस्वरूप ये दुग्धकाल से पूर्व में भी माताओं को यदि इन वसा घुलनशील रसायनयुक्त पदार्थों का आहार दिया गया हो तो वे दुग्ध काल में दुग्ध की गुणवत्ता को संदूषित कर सकते है.

एक माता के गर्भाधान से पूर्व, पूरे जीवनकाल में कीटनाशकों एवं रोगनाशकों (रसायनों) का शरीर पर जमाव, मां के दूध को दुष्प्रभावित कर सकता है. इस कारण से वसा (फैट) में घुलनशील रसायन मां के दूध को सबसे ज्यादा संदूषित कर सकते हैं. सामान्यतौर पर शैशव काल में बच्चे तीन स्तर तक प्रभावित हो सकते हैं. पहले तो इन विषाक्त पदार्थों का दिमाग (ब्रेन) पर असर, दूसरा यह कि मस्तिष्क (ब्रेन) के विकास पर असर एवं तीसरा यह कि विषाक्त पदार्थ 'वसा' में घुले रह कर मौजूद रहते हैं, तो मनुष्य के मस्तिष्क को बचाने वाले "ब्लड ब्रेन बैरियर" को प्रभावित कर सकते हैं. यह "ब्लड ब्रेन बैरियर" शरीर के शेष हिस्से में प्रवाहित रक्त की विषाक्तताओं से मस्तिष्क को सुरक्षा प्रदान करने का कार्य करता है. इसके दुष्प्रभावित होने से बच्चों के विकास में और भविष्य में बुरा असर पड़ सकता है. इस प्रकार बच्चों पर विशेष रूप से न्यूरोटॉक्सिक पेस्टीसाइड्स के एक्सपोजर से संवेदनशीलता बढ़ जाती है.

खाद्य श्रृंखला पर शिखर पर उपलब्ध विष : मां के स्तन से दुग्धपान पर निर्भर शिशु के शरीर को वास्तव में इन विषाक्त रसायनों के पहुंचने की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि बालक को गर्भावस्था में कितनी मात्रा में ये रसायन गर्भनाल (प्लेसेंटा) के द्वारा पहुंचते हैं. तदुपरांत मां के स्तन के दूध में इन रसायनों की सांद्रता कितनी है. इन दोनों का सम्बन्ध मां के शरीर में व्याप्त विषैले रसायनों की उपलब्धता तथा बच्चे को पिलाए जाने वाले दूध की मात्रा पर निर्भर करता है. मां के दूध में वसा की मात्रा (%) पोषणकाल में बदलती रहती है. प्रसव उपरांत माँ के दूध में प्रारंभिक काल में वसा का प्रतिशत ज्यादा होता है, बनिस्बत बाद की अवधि के. इसी प्रकार दूध पिलाना आरंभ करने के समय में वसा की मात्रा ज्यादा होती है, बनिस्बत थोड़ी देर के बाद के दूध में. इसी कारण से थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बार-बार दूध पिलाए जाने की स्थिति में बच्चे को ज्यादा वसा की मात्रा मिलने के कारण अधिक मात्रा में "वसा घुलनशील विषैले रसायन" शरीर में पहुंच सकते हैं. किन्तु, एक शिशु के शरीर में कीटनाशी रसायनों की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि माँ के दूध में ये किस स्तर तक थे तथा इसमें से कितनी मात्रा को शिशु ने अवशोषित किया और कितनी मात्रा को शरीर से बाहर निष्कासित कर दिया. यहां यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि इन विषैले रसायनों को निकालने का मार्ग, गुर्दे के द्वारा छान कर तथा यकृत के द्वारा चयापचयन करके ही है, जो कि यकृत की कार्यक्षमता पर निर्भर है. किन्तु, प्रसव उपरांत शैशव अवस्था में ये दोनों ही अंग बहुधा बहुत कमजोर अवस्था में होते हैं तथा पूर्ण कार्यक्षमता हेतु

विकसित नहीं हुए होते हैं. फलस्वरूप इन अंगों को इन विषाक्त पदार्थों को निकालने की क्षमता भी कम ही होती है. इस प्रकार विष निष्कासन तंत्र शैशव अवस्था में कमजोर ही होता है. खासकर कम वजन वाले कमजोर बच्चों में तो और भी कम विकसित होता है, जबकि ऐसे बच्चों की संख्या कम से कम 60 प्रतिशत तो होती ही है. उच्च जोखिम वाला जन समूह यथा गरीब जीवनशैली, कुपोषण, अल्पपोषित माताएं या कम उम्र की माता (टीनेज मदर), गर्भकाल में सुपोषण की कमी या देर से सुपोषण आदि के कारण भी करीब 12 प्रतिशत से अधिक बच्चों का वजन सामान्य से कम होता है. इन अल्प परिपक्व शिशुओं में जीवन क्षमता पहले से ही कम होती है, क्योंकि वे पहले से ही रोगों के प्रति संवेदनशील होते हैं तथा उनमें शारीरिक विकास कम होने हेतु अनेक अन्य कारण भी होते हैं. अपरिपक्व जन्मे शिशुओं में विष गर्भित मां के दूध से दुष्प्रभाव होने की संभावना केवल इस कारण से अधिक नहीं होती कि उसके यकृत एवं गुर्दे सक्षम नहीं होते, अपितु "ब्लड ब्रेन बैरिअर" की प्रतिरक्षा टूटने की ज्यादा संभावना होती है. इन कारणों से कीटनाशकों तथा उनको शरीर में घोलकर परिवहन करने वाले माध्यम यथा वसा (फैट) जो कि दोनों ही न्यूरो टॉक्सिन के रूप में चिन्हित हैं, शिशु स्वास्थ्य के प्रति गंभीर चिंता उत्पन्न करते हैं. केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (सेंट्रल नर्वस सिस्टम) को क्षतिग्रस्त करने की संभावना ज्यादा होती है. चूंकि यह सत्य है कि मस्तिष्क एवं तंत्रिका तंत्र का सर्वाधिक विकास जन्मोपरांत ही होता है.

संदूषण के स्रोत : मां एवं शिशु में इन कीटनाशकों के संपर्क में आने से के स्रोत बहुत स्पष्ट हैं. इस बात का आंकलन करना महत्वपूर्ण है कि कार्यस्थल, निवास, सामुदायिक स्थल एवं अन्य कहां-कहां से इन कीटनाशकों से पर्याप्त निकटता हो सकती है. चिंताजनक रसायनों में सीसा (लेड), पारा (मरकरी) एवं कैडमियम तथा हैलो जिनेटेड हाइड्रोकार्बन हैं, जिनमें वसा में घुलनशील पेस्टीसाइड शामिल हैं, जो मां के दूध में उच्च वसा स्तर के कारण सरलता से स्थानांतरित हो जाते हैं.

बहुत सारे कार्मिक अपने कार्यस्थल से कीटनाशकों के सम्पर्क में आते हैं, तो बहुत सारे लोग, जिनके कार्य में यद्यपि कीटनाशक का सम्पर्क नहीं भी होता, पर उनके कार्यालय, परिवहन गतिविधियों, अस्पताल या पार्क इत्यादि, जहां कीटनाशक प्रयुक्त होते हैं, पर मौजूदगी के कारण सम्पर्क में आ जाते हैं. घरों में कीटनाशकों का प्रयोग नाना प्रकार से होता है. भवन संरचनाओं में कीट नियंत्रण हेतु, बगीचों में कीट नियंत्रण, खेती में कीट नियंत्रण, समुदाय में कीट नियंत्रण, खरपतवार नाश हेतु रसायन छिड़काव आदि से इन रसायनों से सम्पर्क हो जाता है.

समुदाय में अस्पतालों, स्कूलों, पार्कों, मालों में, बाजार में, सिनेमा भवनों में, बगीचों में, भंडार ग्रहों में कीटनाशकों का प्रचुरता से उपयोग किया जाता है. हवा, पानी, भोजन, दूध, फल, सब्जी, अनाज ये सभी शरीर तक कीटनाशक रसायन पहुंचाने के वाहक बन चुके हैं. शरीर में प्रवेश के मार्गों में, श्वास तंत्र, फेफड़े, चमड़ी, पाचन तंत्र, गर्भावस्था में प्लेसेंटा (गर्भनाल) तथा स्तनपान के समय मां का दूध है. इस प्रकार नाना प्रकार के स्रोतों से कीटनाशक शिशु के शरीर में पहुंच सकते हैं.

स्वास्थ्य के प्रति चिंता : वर्तमान में उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर यद्यपि यह स्पष्ट कथन करना बहुत कठिन है कि वास्तव में उपरोक्त विषाक्तता से कितना निश्चित दुष्प्रभाव है. हमारी समझ केवल उच्च स्तरीय मात्रा में कीटनाशकों के सम्पर्क के दुष्प्रभाव तक सीमित है. हमारे पास अभी भी इन शिशुओं पर बाल्यावस्था में सूक्ष्म मात्रा में ग्रहण किए जाने वाले कीटनाशकों के दीर्घावधि दुष्प्रभावों पर निश्चित आंकड़े नहीं हैं. पर आज भी यह ज्ञात है कि कीटनाशक, बाल्यावस्था में शिशुओं पर दुष्प्रभाव अवश्य डाल सकते हैं. इनके कारण आनुवांशिक परिवर्तन, कैंसर रोग, तंत्रिका रोग, रक्षा तंत्र में अवरोध (इम्यून डिस्टरबेंस) तो ज्ञात हैं.

अभी तक यह कहना भी कठिन है कि कीटनाशक रसायनों की कितनी सूक्ष्म मात्रा सुरक्षित है. तदैव, इस लेख का आशय हमें अपने चतुर्दिक पर्यावरण में बढ़ रहे कीटनाशकों के जीव तंत्र पर प्रवेश करने हेतु सजग करने हेतु है तथा यह निगरानी रखना जरूरी है कि वर्तमान में प्रयोग किए जाने वाले विषैले रसायन किस प्रकार से जीव प्रणाली में संचारित हो रहे हैं. माँ के दूध को भी उस निगरानी से मुक्त रखना ठीक नहीं.

भविष्य की सुरक्षा : चूंकि, आज के बालक ही देश का भविष्य हैं तथा बच्चों के जन्म काल से बढ़ रहे नाना प्रकार के रोग यथा बाल्य मधुमेह, तांत्रिक विकृतियां, नेत्र रोग, हृदय रोग, चर्म रोग, कैंसर आदि इस बात के लिए हमें मजबूर करते हैं कि हम अपने पर्यावरण में बढ़ रहे विषाक्त रसायनों के जीव प्रणाली में व्याप्तता पर निरंतर निगरानी रखें और सजग रहें. जहां तक सम्भव हो, हम इन रसायनों का कम से कम उपयोग करें तो ही अच्छा है.

सम्पर्क : **एनवायरमेंट एनर्जी फाउडेषन, 28 कालेज रोड, चौबे कालोनी, रायपुर (छ.ग.)**

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त लेख

उपयोगी वनस्पति पपीता

- डॉ.देवेश कुमार गुप्ता

प्रकृति हम सभी को स्वस्थ एवं निरोग बनाए रखना चाहती है, इसलिए उसने अपने अद्भुत खजाने में से हमें अनेक उपयोगी फल, फूल एवं सब्जियां प्रदान की है. इन्हीं में से एक फल पपीता है जो अमृततुल्य है, क्योंकि स्वास्थ्यवर्धक होने के साथ-साथ यह अनेक रोगों को ठीक करता है. पपीता उष्ण कटिबन्धीय जलवायु में पैदा होने वाला पौधा है. यह सर्वप्रथम उत्तरी अमेरिका एवं दक्षिणी अमेरिका और मैक्सिको देशों में उपजाया गया था वहीं से इसका प्रसार विश्व के अन्य देशों में हुआ. पपीता अनेक नामों से जाना जाता है. अंग्रेजी में इसे पपाया कहते हैं तथा इसका वानस्पतिक नाम *केरिका पपाया* है और यह कैरिकेसी कुल का सदस्य है. इग्लैण्ड के कुछ भागों में पपीता सेन्ट इग्नेशियस बीन के नाम से भी जाना जाता है. भारत में सर्वप्रथम 16वीं शताब्दी में पुर्तगाली इसे यहां पर लाये थे. उन्होंने ही सबसे पहले केरल प्रान्त के कालीकट के वन क्षेत्रों में इसके बीजों को बो करके पौधे तैयार किये थे. फिलीपीन एवं चीन में पपीते की पैदावार बड़ी मात्रा में की जाती है क्योंकि इन देशों में पपीते की फसल को नगदी फसल (क्रैश क्रॉप) के रूप में उगाया जाता है. आजकल फिलीपीन्स के पपीते के बीज श्रेष्ठतम माने जाते हैं तथा विश्व में फिलीपीन्स, पपीते के उन्नत बीजों के लिए अच्छा निर्यातक देश है. पपीता को बलुई दोमट एवं दोमट मिट्टी, दोनों में ही उगाया जा सकता है. अलग-अलग देशों में पपीते की कई प्रजातियां पायी जाती हैं जो अपने स्वाद, रंग, गंध, आकार में अलग-अलग होती हैं. आजकल टिश्यू कल्चर तकनीक से ऐसा पपीता भी पैदा किया जा चुका है. जिसमें बीज नहीं होते हैं. हमारे देश में पपीते की मुख्य तीन प्रजातियां पायी जाती हैं - देशी, पहाड़ी तथा कैरेबियन, जिसमें देशी और पहाड़ी पपीता ज्यादा उगाया जाता है. दक्षिणी भारत में लाल रंग के गूदेवाला बड़ा पपीता उगाया जाता है जो देशभर में बिक्री के लिए आजकल सर्वत्र उपलब्ध रहता है. उत्तरी भारत में तापक्रम का उतार-चढ़ाव अधिक होता है अतः उभयलिंगी फूल वाली किस्में उत्पादन नहीं दे पाती हैं. कोयम्बटूर 1, पंजाब स्वीट, पूसा डेलिसियस, पूसा मजेस्टी, पूसा जाएट, पूसा ड्वार्फ, पूसा नन्हा (म्यूटेंट) आदि किस्में जिनमें मादा फूलों की संख्या अधिक होती हैं, और उभयलिंगी होते हैं, ये उत्तरी भारत में काफी सफल हैं. हवाई की 'सेलो' किस्म जो उभयलिंगी और मादा पौधे होते हैं, उत्तरी भारत में इसके फल छोटे और निम्नकोटि के होते हैं.

पपीते का नर एवं मादा पौधा

पपीता एक सर्वसुलभ फल हो गया है क्योंकि यह बहुत जल्दी पनपता है. इसकी अच्छी पैदावार होती है, इसके फल लम्बे समय तक प्राप्त होते रहते हैं, तथा फलों की पोषण (पोषक क्षमता) गुणवत्ता उच्चकोटि की होती है. इस प्रकार हरे पपीतों की सब्जी, फ्रूट प्रोसेसिंग, पपैन उत्पादन पपीते के कच्चे फलों से प्राप्त होता है. इन कारणों से पपीते की फसल उच्च मुनाफा प्रदान करने वाली कैश क्रॉप हो गयी है. पपीते के पेड़ नर और मादा अलग-अलग होते हैं जिनमें नर एवं मादा फूल खिलते हैं लेकिन पपीते के कुछ उभयलिंगी पौधे भी होते हैं जिनमें दोनों ही प्रकार के फूल खिलते हैं.

पपीते की उगायी जानेवाली कुछ प्रमुख किस्में : पूसा डोलसियरा : यह अधिक उपज देने वाली पपीते की गाइनोडाइसियश प्रजाति है जिसमें मादा और नर-मादा दो प्रकार के फूल एक ही पौधे पर आते हैं. पके फल का स्वाद मीठा तथा आकर्षक सुगंधयुक्त होता है.

पूसा मजेस्टी : यह भी एक गाइनोडाइसियश प्रजाति है. इसकी उत्पादकता अधिक होती है तथा भण्डारण क्षमता भी अधिक होती है.

पूसा जाएंट : यह बहुत अधिक वृद्धि वाली नस्ल है. नर तथा मादा फूल अलग-अलग पौधों पर जाते हैं. इसके पौधे अधिक मजबूत तथा तेज हवा से गिरते नहीं हैं.

पूसा ड्वार्फ : यह छोटी बढ़वार वाली डायसियश किस्म है, जिसमें नर तथा मादा फूल अलग-अलग पौधों पर आते हैं. फल मध्यम तथा चपटे आकार वाले होते हैं.

पूसा नन्हा : पपीते की इस प्रजाति के पौधे बहुत छोटे होते हैं तथा यह गृहवाटिका के लिए अत्यन्त उपयोगी है. साथ-साथ यह बागवानी के लिये भी अच्छी किस्म है.

कोयम्बटूर -1 : इसका पौधा छोटा तथा डायसियश होता है. फल मध्यम आकार के तथा गोलाकार होते हैं.

कोयम्बटूर -2 : यह एक गाइनोडाइसियश प्रजाति है. पौधा लम्बा मजबूत तथा मध्यम आकार का फल देने वाला होता है. इसके पके फलों में शर्करा की मात्रा अधिक पायी जाती है. इसका गुदा का रंग लाल होता है.

हनीड्यू (मधु बिन्दु) : इस प्रजाति में नर पौधों की संख्या कम होती है तथा बीज के प्रकरण में अधिक लाभदायक होती है. इसका फल मध्यम आकार का बहुत मीठा तथा खुशबू लिये होता है.

कूर्गहनीड्यू : यह गाइनोडाइसियश प्रजाति है जिसमें नर पौधे नहीं होते हैं. फल का आकार मध्यम तथा लंबत गोलाकार होता है. गूदे का रंग नारंगी-पीले रंग लिये होता है.

इनके साथ-साथ वाशिंगटन तथा पन्त पपीता-1 जैसी किस्में भी अच्छी फसल देती हैं.

पपीतों में पाये जानेवाले पोषक तत्व एवं फाइटोकेमिकल्स : पपीते का फल अनेक पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत है. इसमें निम्न तत्व पाये जाते हैं :

पानी	86.60 प्रतिशत
कार्बोहाइड्रेट	9.50 प्रतिशत
खनिज लवण	0.40 प्रतिशत
कैल्शियम	0.01 प्रतिशत
प्रोटीन	0.50 प्रतिशत
फास्फोरस	0.01 प्रतिशत
खनिज पदार्थ	0.40 प्रतिशत
ईथर विचूर्ण	0.10 प्रतिशत

इसमें कैरोटीन, विटामिन सी, फोलेट, रेशा, फाइटोकेमिकल्स, विटामिन 'ए' सहित लाइकोपीन और पोलीफिनोल्स भी पाये जाते हैं. जिससे पपीते की आहार गुणवत्ता कई गुना बढ़ जाती है. पपीते में उच्च मात्रा में पोटाशियम तत्व भी पाया जाता है. इसके नियमित प्रयोग

पपीता फल (लाल गूंदे वाला)

से कब्ज रोग का निदान हो जाता है. इसमें पाये जाने वाले पपैन का हमारे शरीर के पाचन संस्थान को चुस्त-दुरुस्त रखने में बड़ा ही योगदान रहता है. पपीते का रस नियमित पीने से बड़ी आंत की सफाई होती है और उसमें स्थित संक्रमण, श्लेष्मा और पीप का निष्कासन होने लगता है. ऐसे घाव जो अन्य दवाओं से ठीक नहीं होते हैं उन पर पपीते

पपीता फल (पीले गूदे वाला)

का छिलका कुछ दिनों तक लगातार लगाने से अच्छे परिणाम मिलते हैं. पपीते में सूजन विरोधी और कैंसर से बचाने के गुण मौजूद हैं इसलिए यह उन लोगों के लिए अत्यधिक फायदेमन्द है जो शोथ, संधिवात, गठिया रोगों से पीड़ित रहते हैं.

पपीता उन लोगों के लिये भी अमृत समान है जो हमेशा सर्दी, जुकाम, खांसी, फ्लू आदि से बार-बार परेशान रहते हैं. पपीते का उपयोग करने से हमारे शरीर की रोग प्रतिरोध क्षमता (इम्यून सिस्टम) मजबूत होती है. धमनियों के कठोर होने के दोष का निवारण करने में पपीता अत्यन्त हितकारी है. पपीते का रेशा खराब कोलेस्ट्रोल का स्तर घटाने में सहायक होता है और इस प्रकार यह हृदय की सुरक्षा करता है. इसके नियमित सेवन से शरीर के अंगों और ग्रन्थियों में कैंसर की रोकथाम और बचाव होता है. पपीते, पेट के तीन प्रमुख रोगों कफ, वात और पित्त से राहत पहुंचाता है. पपीते में बड़ी मात्रा में विटामिन 'ए' पाया जाता है जिसके कारण यह आँखों और त्वचा के लिये बहुत ही अच्छा माना जाता है. पपीता में कैल्शियम भी अच्छी मात्रा में पाया जाता है इससे हमारे शरीर क़ी हड्डियाँ भी मजबूत रहती हैं. पपीता के सेवन से हमारे बाल भी स्वस्थ रहते हैं तथा उनमें खुश्की पैदा नहीं होती है. पपीता खूनी बवासीर में भी बहुत लाभकारी साबित हुआ है. पपीता के कच्चे फलों से पपेन तैयार किया जाता है जिसका सौंदर्य जगत में तथा उद्योग जगत में व्यापक उपयोग हो रहा है.

पपीते का पत्ता, कच्चे पपीता तथा पके हुए पपीता का फल, हमारे शरीर में होने वाले विभिन्न प्रकार के रोगों के उपचार में अत्यधिक कारगर एवं उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं. इनके सेवन या उपयोग से जहां निरोगी बने रहना आसान है, वहीं कुछ जटिल रोगों के उपचार में इनका प्रयोग बहुत ही लाभकारी सिद्ध हुआ है.

हृदय रोग में पपीते के पत्तों का काढ़ा बनाकर प्रतिदिन पीने से हृदय का रोग ठीक होता है. इसके सेवन से घबराहट दूर होती है. पपीता के गूदे को लेकर मथ लें और इसकी 100 ग्राम मात्रा में 2 लौंग का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से हृदय की धड़कन सामान्य होती है. उच्च रक्तचाप से पीड़ित रोगियों को प्रतिदिन पपीता का सेवन करना चाहिए. पपीता का रस एक कप, गाजर तथा संतरे का रस आधा-आधा कप और तुलसी व लहसुन का रस दो-दो चम्मच, इन सभी को मिलाकर कुछ दिनों तक दिन में दो बार सेवन करने से उच्च रक्तचाप सामान्य होने लगता है.

मधुमेह पपीता, कत्था, खैर (चूना) व सुपारी का काढ़ा बनाकर पीने से काफी लाभ होता है. 20 ग्राम पपीता, 5 ग्राम कत्था व सुपारी मिलाकर कूटकर इसका काढ़ा बनाकर सेवन करने से मधुमेह रोग ठीक होता है.

हैजा में पानी अथवा गुलाब जल में पपीता घिसकर

पपीते की खेती

चटाने से हैजा के रोगी को फायदा पहुंचता है.

खून की कमी (रक्तल्पता) में पपीते का गूदा 200 ग्राम की मात्रा में लगातार 20 दिनों तक प्रतिदिन खाने से शरीर में खून की कमी दूर होती है.

गुर्दे की पथरी में 6 ग्राम पपीता के जड़ को पीसकर 50 ग्राम पानी में घोल 21 दिनों तक सुबह-शाम पीने से गुर्दे की पथरी गलकर निकल जाती है.

पेट दर्द में पपीते में काली मिर्च, नींबू का रस और सेंधा नमक डालकर खाने से कब्ज (गैस) के कारण होने वाले उदर (पेट) के दर्द में बहुत लाभ होता है. इसी प्रकार नींबू के रस में चीनी मिलाकर पीने से भी पेट का दर्द दूर होता है.

यकृत (जिगर) के रोग में पपीता के बीजों को सुखाकर बारीक चूर्ण बनाकर उसकी 3 मात्रा में आधा नींबू का रस मिलाकर दिन में दो बार सेवन करने से यकृत की बीमारी में फायदा होता है. कच्चे पपीते का रस दो चम्मच तथा उसमें चीनी मिलाकर लेने से यकृत और प्लीहा के रोग में आराम मिलता है. 10 ग्राम कच्चे पपीते के दूध (पपेन) में चीनीं मिलाकर दिन में 3 बार सेवन करने से यकृत (लीवर) का बढ़ना ठीक होता है.

जोड़ों एवं माँसपेशियों के दर्द को दूर करने हेतु पपीते के हरे पत्तों को गरम करके, चिकने भाग की तरफ से बांधने या सिकाई करने से इनका दर्द ठीक होने लगता है. इसी प्रकार हड्डी टूटने पर पपीता का एक कप रस, आधा कप गाजर का रस और आधा कप आंवले का रस मिलाकर दिन में दो बार पीने से हड्डी का टूटना ठीक होने लगता है तथा दर्द में आराम मिलता है.

चेहरे का रंग निखारने के लिये एक कप पपीता का रस एवं एक कप अमरूद का रस मिलाकर दिन में 2 बार पीने से कुछ ही दिनों में चेहरे पर चमक आ जाती है. इसी प्रकार पपीते का रस, गाजर का रस और आधी मात्रा में पालक का रस मिलाकर दिन में 2 बार सेवन करने से त्वचा के सभी रोग ठीक होने लगते हैं.

सौन्दर्य निखारने में पपीता का उपयोग : आजकल पपीता का उपयोग सौन्दर्य को निखारने में खूब किया जाता है. इस हेतु पके पपीते को छीलकर पीस ले और इसे चेहरे पर लगायें, इसे लगाने के 15-20 मिनट के बाद जब यह सूख जाए तो चेहरे को पानी से धो लें और मोटे तौलिए से चेहरे को अच्छी तरह से साफ कर लें. इसके बाद चेहरे पर तिल या नारियल का तेल लगायें. इस प्रकार इसका उपयोग करने से 1 से 2 सप्ताह में ही चेहरे के दाग, धब्बे व मुँहासे ठीक हो जाते हैं तथा चेहरा सुंदर लगने लगता है तथा झुर्रियां व काला घेरा आदि भी खत्म होने लगते हैं.

इस तरह पपीता एक ऐसा बहुपयोगी फल है, जिसके नियमित सेवन से शरीर में कभी भी विटामिनों की कमी नहीं होती है. बीमार व्यक्ति को दिये जाने वाले फलों में पपीता एक प्रमुख फल है, क्योंकि इसके एक नहीं अनेक फायदे हैं. पपीता आंखों और त्वचा के लिये बहुत ही अच्छा माना जाता है. कैल्शियम की अच्छी मात्रा मिलने से हड्डियां मजबूत बनती हैं. यह प्रोटीन को पचाने में भी सहायक है क्योंकि इसमें रेशे की प्रचुर मात्रा होती है, जिन लोगों को बराबर खांसी-सर्दी की शिकायत रहती है, उनके लिये पपीते का नियमित सेवन अत्यन्त लाभकारी होता है. इस प्रकार पपीता अनेक गुणों से भरपूर ऐसा उपयोगी स्वास्थ्यवर्धक फल है, जिसके कारण सभी लोग अपनी गृहवाटिकाओं में इसे लगाना पसन्द करते हैं.

सम्पर्क : **नई जी-10, हैदराबाद कॉलोनी, बीएचयू, वाराणसी-221005 (उत्तर प्रदेश)**

स्वर्ण जयंती वर्ष प्रतीक चिन्ह प्रतियोगिता

प्रिय पाठको जैसा कि आप सब जानते हैं कि हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की स्थापना ने अपने 50वें वर्ष में पदार्पण किया है. अतः परिषद यह वर्ष स्वर्ण जयंती वर्ष के रूप में मना रहा है. स्वर्ण जयंती वर्ष के उपलक्ष्य में वर्ष में कई कार्यक्रम आयोजित करने की योजना है. इसी क्रम में एक 'राष्ट्रीय संगोष्ठी : विज्ञान एवं पुरातत्व' का आयोजन संस्कृति एवं पुरातत्व संचालनालय, छत्तीसगढ़ के सहयोग से रायपुर में 16-19 मार्च 2017 को किया गया. परिषद के स्वर्ण जयंती वर्ष कार्यक्रमों में प्रयोग के लिये एक लोगो (Logo) डिजाइन की प्रतियोगिता भी रखी गई, जिसमें भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के श्री भूषण चवान विजेता रहे - इन्हे रु 3000/- का नकद पुरस्कार एवं प्रशिस्त पत्र परिषद द्वारा 25 मार्च 2017 स्वास्थ्य संगोष्ठी कार्यक्रम में प्रदान किया गया परिषद के सभी कार्यक्रमों में एवं वैज्ञानिक पत्रिका में स्वर्ण जयंती वर्ष में इस लोगो का प्रयोग किया जायेगा. परिषद सभी प्रतिभागियों एवं निर्णायक मंडल के सभी सदस्यों का हार्दिक आभार व्यक्त करती है

डॉ. कुलवंत सिंह
सचिव, हिं.वि.सा.परिषद

पीड़कनाशी रसायन और मृदा प्रदूषण

- डॉ. दिनेश मणि, डी.फिल, डी. एस-सी.

विगत कई दशकों से खेती में पीड़कनाशियों यथा- कीटनाशी, शाकनाशी, खरपतवारनाशी, पादप वृद्धि नियामकों इत्यादि का अत्यधिक एवं असंतुलित प्रयोग किया जा रहा है, जिसके फलस्वरूप मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है. इन रसायनों के प्रयोग से खरपतवार, कीट व रोग तो नियंत्रित हो जाते हैं, परन्तु इन विषैले रसायनों का मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है. किसानों को इन रसायनों के प्रयोग की सही जानकारी न होने के कारण आज उर्वर भूमि बंजर भूमि में बदलती जा रही है. साथ ही मिलावटी व नकली कृषि रसायनों के प्रयोग से भी मृदा का स्वास्थ्य बिगड़ता जा रहा है.

पीड़कनाशी ऐसे रसायन हैं जो पौधों को क्षति पहुंचाने वाले कीटों, कवकों, सूत्रकृमियों, कृन्तकों एवं खरपतवारों को नष्ट करते हैं, या उन पर नियन्त्रण रखते हैं. पीड़कनाशियों को उनके प्रकार और उपयोग के आधार पर कीटनाशी, कवकनाशी, सूत्रकृमिनाशी, खरपतवारनाशी, शाकनाशी आदि वर्गों में वर्गीकृत किया गया है.

फसलों से अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु फसल संरक्षण में जीवनाशी रसायनों का प्रयोग बहुत समय से हो रहा है. आरम्भ में ये रसायन बहुत ही प्रभावी सिद्ध हुए, किन्तु विगत कुछ दशकों से इनकी मारक क्षमता में कमी आई है तथा इनके अत्यधिक प्रयोग के फलस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण की समस्या भी उत्पन्न हो गई है. पर्यावरण के विभिन्न घटकों यथा मृदा, जल, वायु, पौधे, जीवजन्तु दूध, अंडा, माँस तथा अन्य खाद्य पदार्थ सभी में इन रसायनों के अवशेष पाये जा रहे हैं. इन समस्याओं के निराकरण हेतु रसायनों के कम से कम इस्तेमाल पर बल दिया जा रहा है.

रॉशेल कार्सन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "द साइलेण्ट स्प्रिंग" में बिना सोचे, समझे कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग के बारे में विस्तार से वर्णन किया है. उन्होंने बताया कि कीटनाशकों का इतनी लापरवाही से प्रयोग किया गया है कि वास्तविक हानिकारक कीटों के अतिरिक्त अन्य जीवों को भी नष्ट कर दिया गया जिसका परिणाम यह हुआ कि कीटों का जैविक नियंत्रण प्रभावित हुआ और कीटों में रासायनिक कीटनाशकों के लिए प्रतिरोध उत्पन्न हो गया. कीट पुनः बड़ी संख्या में उत्पन्न हुए, द्वितीय हानिकारक कीट भी उत्पन्न हो गए और पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो गई.

जीव जगत में पौधभक्षी कीट 26 प्रतिशत एवं शिकारी, परजीवी, परागणकर्मी तथा सफाईकर्मी कीट 31 प्रतिशत हैं. पौधभक्षी अथवा नाशीकीट की केवल एक प्रतिशत जातियाँ ही क्षति पहुंचाती हैं. विश्व में मात्र 3500 कीटों की जातियाँ ही नाशीकीट के रूप में पहचानी गई है. हमारे देश में कीटों की लगभग 1000 जातियाँ ही फसलों एवं फसल उत्पादन को खेतों में अथवा भंडारण में क्षति पहुँचाती हैं.

यद्यपि कृषि में प्रयुक्त किये जाने वाले विभिन्न कीटनाशी, शाकनाशी, कवकनाशी आदि रसायनों का भूमि में विघटन होता रहता है और इनसे तरह-तरह के कम विषैले या विष रहित अवशेष पदार्थ बनते रहते हैं, परन्तु इनमें से कुछ रसायन दीर्घ स्थायी होते हैं और इनके अवशेष पदार्थ मृदा जैव मण्डल को बहुत समय तक प्रदूषित किये रहते हैं. इन रसायनों के अवशेष पदार्थ मिट्टी में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवों को (जो कि मिट्टी की उर्वरता के लिये उत्तरदायी होते हैं) को प्रभावित करते है और उनकी कार्यशीलता को कम कर देते हैं. ये रसायन तब तक मिट्टी के जैवमण्डल को असंतुलित किये रहते हैं, जब तक कि इनका पूर्ण क्षय नहीं हो जाता. वाष्पीकरण, वाष्पोत्सर्जन फोटोलिसिस, पौधों की मेटाबोलिक क्रियाओं, निक्षालन, सूक्ष्मजीवों द्वारा विच्छेदन जल अपघटन तथा अन्य रासायनिक क्रियाओं आदि के अतिरिक्त मृदा में कणों तथा कार्बनिक पदार्थ द्वारा इन विषाक्त रसायनों का अधिशोषण हो जाता है. कुछ रसायन तथा उनके अवशेष

पदार्थ इतने स्थायी देखे गये हैं कि एक बार उपयोग करने के उपरान्त उनके अवशेष पदार्थ वर्षों तक मिट्टी में मौजूद रहते हैं और मृदा-जीवों के लिये अत्यन्त विषाक्त बने रहते हैं. मिट्टी में आर्गेनोक्लोरीन वर्ग के कीटनाशकों का स्थायित्वकाल काफी लम्बा होता है इनमें से डी.डी.टी. तो काफी बदनाम हो चुका है. इसके अवशेष कई वर्षों तक मृदा में विषाक्त रूप में पड़े रहते हैं. इसके इसी गुण के कारण विकसित देशों में इसके उपयोग पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है किन्तु विकासशील देशों में इसका प्रयोग जारी है. भविष्य में इन्हें भी डी.डी.टी. पर प्रतिबन्ध लगाना होगा अन्यथा मृदा प्रदूषण में बढ़ोत्तरी होती जायेगी.

मृदा में आर्गेनोक्लोरीन कीटनाशियों के स्थायित्व पर बहुत शोधकार्य हुआ है. इनके दीर्घ स्थायी होने के कारण ही आर्गेनोफॉस्फेट, संश्लेषित पायरेथ्राइड आदि अति विषाक्त, अल्पस्थायी रसायनों की खोज हुई जो आर्गेनोक्लोरीन रसायनों की अपेक्षा अल्पस्थायी तो हैं पर इनके तीक्ष्ण विष मृदा जीवों एवं जीवाणुओं के लिए और भी हानिकारक हैं और पर्यावरण को संदूषित करते हैं.

दीर्घस्थायी रसायन तब तक मृदा जैव मंडल को असंतुलित किये रहते हैं जब तक ये पूर्ण रूप से नष्ट नहीं हो जाते. मृदा के कणों तथा कार्बनिक कोलाइडों द्वारा इन विषाक्त जीवनाशी रसायनों का अधिशोषण उस रसायन की उपलब्धि, उसकी जैविक क्रिया, जीवाणु के प्रति सहिष्णुता और जीवाणु द्वारा उपापचयी क्रिया आदि को तो प्रभावित करती ही है साथ ही मृदा में कार्बनिक पदार्थों का अपक्षण, नाइट्रोजन, स्थिरीकरण, फास्फोरस तथा सल्फर के विलयनीकरण आदि से सम्बन्धित महत्वपूर्ण क्रियायें भी इससे प्रभावित होती हैं.

चूंकि किसी खेत की मृदा में प्रयुक्त कीटनाशी रसायन प्रदूषण का मुख्य कारक बनता है, अतः इन रसायनों के स्थानांतरण का अध्ययन उनके दीर्घ स्थायित्व की जाँच के लिए आवश्यक है.

कृषि में प्रयुक्त विभिन्न कीटनाशी, शाकनाशी तथा कवकनाशी मृदा में मिलकर विघटित होते हैं तो तरह-तरह के विषैले या विषरहित अवशेष पदार्थ बनते रहते हैं परन्तु इनमें से कुछ रसायन दीर्घकाल तक मृदा में अपरिवर्तित रह जाते हैं. इससे न केवल मृदा अपितु मृदा जैवमण्डल भी प्रदूषित होता है.

मृदा में आर्गेनोक़्लोरीन वर्ग के कीटनाशियों का स्थायित्व काल काफी लंबा है. इनमें से डी.डी.टी. के अवशेष सर्वाधिक काल तक (2 से 5 वर्ष तक) विषाक्त रूप में रहते हैं. यदि ये कीटनाशी दीर्घकाल तक मनुष्य या पशु शरीर में संचित होते रहे तो कालांतर में अनेक रोग हो सकते हैं.

सारणी - 1

कुछ प्रमुख पीड़कनाशियों (पेस्टीसाइड) की दीर्घ स्थायित्व अवधि

	पीड़कनाशी (पेस्टीसाइड)	दीर्घ स्थायित्व अवधि
1.	आर्सेनिक	अनिश्चित
2.	क़्लोरीनेटिड हाइड्रोकार्बन कीटनाशी (जैसे डी.डी.टी., क्लोरडेन, एल्ड्रिन आदि)	2 से 5 वर्ष
3.	ट्रायाजीन शाकनाशी (जैसे, अट्राजीन, सिमेजीन आदि)	1 से 2 वर्ष
4.	बैन्जोइक एसिड शाकनाशी (जैसे, एमीबेन, डाइकाम्बा)	2 से 12 महीने
5.	यूरिया शाकनाशी (जैसे, मोन्यूरॉन, डाइयूरान)	2 से 10 महीने
6.	फिनोक्सी शाकनाशी (जैसे, 2, 4-डी-2, 4, 5-टी)	1 से 5 महीने
7.	आर्गेनोफॉस्फेट कीटनाशी (जैसे मैलाथियान आदि)	1 से 2 सप्ताह
8.	कार्बामेट कीटनाशी	1 से 8 सप्ताह
9.	कार्बामेट शाकनाशी	2 से 8 सप्ताह

पारिस्थितिक प्रतिक्रियाओं के कारण बहुत से कीटों में उनके नियंत्रण के लिए प्रयुक्त होने वाले कीटनाशियों के प्रति प्रतिरोध उत्पन्न होने लगा. इसके परिणामस्वरूप कीट-नियंत्रण के उपाय प्रभावहीन होने लगे. साथ ही अत्यंत आविशालु दीर्घस्थायी और व्यापक प्रभावों वाले कीटनाशियों के अंधाधुंध प्रयोग ने अलक्षित तथा लाभदायक कीटों जैसे परजीवियों, परभक्षियों तथा परागण-कीटों पर प्रभाव डाला और उनकी संख्या घटने लगी. इससे कम हानि पहुँचाने वाले नाशक कीट अधिक हानि पहुँचाने वाले नाशक कीटों में परिवर्तित हो गए. इनका प्रादुर्भाव बार-बार होने लगा, क्योंकि प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या कम हो जाने के कारण प्राकृतिक नियंत्रण में बाधा पहुँची. इन परिस्थितियों ने रासायनिक नियंत्रण विधि को ऐसे दोराहे पर लाकर खड़ा कर दिया कि पिछले अनुभवों के आधार पर इस उपाय पर पुनर्विचार एवं गहन परीक्षण आवश्यक हो गया. फलतः इससे यह निष्कर्ष निकालने के लिए बाध्य होना पड़ा कि नाशक कीट नियंत्रण का अंतिम हल ऐसे उपायों में निहित है. जिसमें कीट नियंत्रण में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न उपायों का संगत और संतुलित समन्वय किया जाये. इसे समन्वित/समेकित/एकीकृत कीट प्रबंधन का नाम दिया गया. कीटनाशी रसायन इस व्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग हैं. लेकिन उनके उपयोग के लिए यह आवश्यक हो गया कि उन्हें अधिक तर्कपूर्ण और संतुलित रूप में प्रयुक्त किया जाये, जिससे लाभकारी कीटों पर कम से कम प्रभाव पड़े.

कीटनाशियों को बार-बार उपयोग में न लाकर यदि आवश्यकतानुसार व्यवहार में लायें, तो इनकी मात्रा को कम किया जा सकता है. इसी के साथ ही यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि किसी पारिस्थितिक-तंत्र में कीटनाशियों के निवेश की मात्रा को भी कम किया जाय. ऐसा देखा गया है कि अधिकतम उपयुक्त परिस्थितियों के अंतर्गत भी प्रयोग की गई कीटनाशी धूल का 10 से 20 प्रतिशत ही पौधों की सतहों पर पहुँचता है, जिसका एक प्रतिशत से भी कम भाग लक्ष्य कीट तक पहुँचता है. इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि कीटनाशियों के उपयोग के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विधियों में पर्याप्त सुधार की संभावना है. साथ ही उनके संरूपण (फार्मूलेशन) और उन उपकरणों में भी सुधार की आवश्यकता है जिनके द्वारा उन्हें लक्ष्य तक पहुँचाया जाता है. इससे कीटनाशियों की निवेशित मात्रा में अवश्य कमी आएगी तथा पर्यावरण प्रदूषण भी कम किया जा सकेगा.

पीड़कनाशियों के दीर्घस्थायित्व से होने वाले प्रदूषण से बचाव के लिए इनके विकल्प जैसे-जैविक नियंत्रण, कृषीय क्रियाओं द्वारा नियंत्रण, भौतिक या याँत्रिक उपायों को अपनाया जाना आवश्यक है. वानस्पतिक उत्पत्ति वाले कीटनाशियों जैसे निकोटीन, पाइरेथ्रिन, रोटेनोन, अजाडिरेक्टिन के इस्तेमाल को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है क्योंकि इनका जैव-विच्छेदन आसानी से हो जाता है और ये कोई विषैले अवशेष पदार्थ नहीं छोड़ते हैं. इस प्रकार पीड़कनाशियों द्वारा होने वाले प्रदूषण से बचा जा सकता है.

सम्पर्क : **पूर्व संपादक ''विज्ञान'' मासिक पत्रिका**
35/3, जवाहर लाल नेहरू रोड, जार्ज टाउन, इलाहाबाद- 211002

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2015 में प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त लेख

छात्रवृत्ति से करें विज्ञान शिक्षा की राह आसान

-मनीष श्रीवास्तव

मानव सभ्यता को सभ्य बनाने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका रही है. प्रत्येक देश की सरकार का प्रयास होता है कि उस देश के सभी बच्चों को बेहतर और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त हो सके. इसलिए शिक्षा को मानव के बुनियादी अधिकार के रूप में निरूपित किया गया है. हमारे देश में भी बच्चों को बुनियादी शिक्षा का अधिकार प्राप्त है और सरकारी स्कूलों में मुफ्त शिक्षा दी जा रही है. हालिया दौर में एक ओर सरकारी विद्यालय तथा दूसरी तरफ प्राईवेट स्कूलों द्वारा शिक्षा प्रदान की जा रही है. सभी बच्चे दसवीं कक्षा तक एकसमान तथा ग्यारहवीं कक्षा से विषय विशेष की पढाई करते हैं. इसके बाद कॉलेज में उच्च शिक्षा का अध्ययन करते हैं. किन्तु सभी छात्रों को इस यात्रा में कुछ विशेष परिस्थितियों से हमेशा दो-चार होना पड़ता है जिनसे उनके अध्ययन में व्यवधान उत्पन्न होता है. वे अपने मनोनुकूल विषय में पढ़ाई निरंतर जारी नहीं रख पाते. इसमें एक

कारण है मार्गदर्शन का अभाव. वहीं दूसरी ओर अध्ययन में आने वाली आर्थिक दिक्कत से भी छात्रों को पढ़ाई छोड़ने के लिये मजबूर होना पड़ता है. आर्थिक अभाव के कारण प्रतिवर्ष लाखों छात्र उच्च शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते. विशेषकर विज्ञान के छात्र क्योंकि विज्ञान शिक्षा एवं शोध कार्यक्रम बेहद महंगे हैं. इसमें सबसे ज्यादा नुकसान उन प्रतिभाशाली छात्रों को होता है जो उच्च माध्यमिक कक्षाओं तक उत्कृष्ट प्रदर्शन के साथ पढ़ाई करते हैं लेकिन आर्थिक अभाव में उच्च शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते हैं. छात्रों को इन परिस्थितियों से निजात दिलाने के लिए सरकार तथा निजी संस्थाओं द्वारा कई छात्रवृत्ति कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं लेकिन जानकारी के अभाव में छात्र इनका लाभ नहीं ले पाते और उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते हैं. इसी समस्या को दृष्टिगत रखते हुए यहां विज्ञान शिक्षण एवं अनुसंधान को लेकर चलाये जा रहे ऐसे ही राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय छात्रवृत्ति कार्यक्रमों के बारे में संक्षिप्त जानकारी दी जा रही है ताकि विज्ञान और तकनीकी शिक्षा का आकाश सूना न रहे तथा देश को प्रतिभाशाली वैज्ञानिक, इंजीनियर प्राप्त हो सकें.

डॉ.एपीजे अब्दुल कलॉम पोस्ट ग्रेजुएट स्कॉलरशिप : वे युवा जो इंजीनियरिंग की विभिन्न शाखाओं में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उच्च अध्ययन करना चाहते हैं. उनके लिए क्वीन विश्वविद्यालय बेल्फास्ट द्वारा चलाया जाने वाला स्कॉलरशिप प्रोग्राम बेहतर अवसर है. इसमें छात्र इलेक्ट्रॉनिक़, इलेक्ट्रिकल्स, कम्प्यूटर साइंस, मेकेनिकल, एयरोस्पेस, केमेस्ट्री, सिविल इंजीनियरिंग और केमिकल इंजीनियरिंग आदि विषयों में स्नातकोत्तर कर सकते हैं.

इस स्कॉलरशिप को प्राप्त करने के लिए आवेदन को विश्वविद्यालय की वेबसाइट से आवेदन फार्म डाउनलोड करना होता है. जिसे संपूर्ण जानकारी के साथ वापस ई-मेल के माध्यम से प्रेषित कर दिया जाता है. इसके बाद साक्षात्कार की प्रक्रिया होती है. जो भारत में ही शहर में या स्काईप के माध्यम से लिया जाता है. इस सारी प्रक्रिया में चयनित होने के बाद छात्र इंजीनियरिंग की किसी भी शाखा में मास्टर्स डिग्री कर सकता है. विश्वविद्यालय द्वारा छात्र को 3000 यूरो की छात्रवृत्ति दी जाती है. छात्रवृत्ति से जुड़ी संपूर्ण जानकारी निम्न लिंक http://www.qub.ac.uk/home/StudyatQueens/InternationalStudents/Internationl Scholarships / Dr A.P.J.AbdulKalam Postgraduate Scholarships

for Indian Students/ पर प्राप्त की जा सकती है.

फेसबुक फैलोशिप प्रोग्राम : कम्प्यूटर साइंस, कम्प्यूटर इंजीनियरिंग, इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग, सिस्टम आर्किटेक्चर आदि विषयों में जो छात्र नियमित रूप से पीएचडी करना चाहते हैं उनके लिए फेसबुक द्वारा दी जाने वाली यह फैलोशिप बेहद मददगार साबित हो सकती है. यह वैश्विक फैलोशिप है जिसके लिए दुनियाभर से किसी भी देश का छात्र आवेदन कर सकता है. फेसबुक द्वारा सामाजिक सरोकार से जुड़ी पहल के अंतर्गत इस फैलोशिप कार्यक्रम का संचालन किया जाता है. वे छात्र जो गुणवत्तापूर्ण अनुसंधान कार्य करना चाहते हैं उन्हें दो वर्षों के लिए फैलोशिप दिये जाने का प्रावधान है. इन दो वर्षों में छात्रों को ट्यूशन फीस, वार्षिक अनुदान के रूप में 37000 हजार डॉलर, शोधकार्य का फेसबुक कार्यालय में प्रदर्शन करने हेतु भुगतान तथा इंटर्नशिप के लिए भुगतान आदि सुविधायें प्रदान की जाती हैं. इस तरह फेसबुक का उद्देश्य प्रतिभाशाली छात्रों को सभी सुविधायें देते हुए उनके कौशल का विकास करना एवं अनुसंधान से प्राप्त परिणामों का समाजहित में उपयोग करना होता है.

इस महत्वकांक्षी फैलोशिप को प्राप्त करने हेतु निम्न दस्तावेजों की आवश्यकता होती है :-

- ☐ शोध संबंधी कार्य की एक रूपरेखा बनाकर प्रस्तुत करना होता है, जिसमें शोध से होने वाले लाभों और उसकी उपयोगिता की जानकारी होनी चाहिये.
- ☐ आवेदक का विस्तृत परिचय.
- ☐ दो व्यक्तियों के अनुशंसा पत्र.
  1. सलाहकार
  2. शैक्षिक तथा औद्योगिक क्षेत्र का प्रतिनिधि

इस फैलोशिप के बारे में और अधिक जानकारी यहां दी जा रही लिंक द्वारा प्राप्त की जा सकती है. www.facebook.com/careers/program/fellowship2015 फिलहाल शैक्षणिक वर्ष 2016-17 तथा 2017-18 के सत्रों के लिए इस फैलोशिप की प्रक्रिया संपन्न हो चुकी है. किंतु भविष्य में विद्यार्थी इस फैलोशिप का लाभ लेकर अपना भविष्य संवार सकते हैं.

इंडियन ऑयल शैक्षणिक छात्रवृत्ति योजना : इंडियन ऑयल भारत सरकार का एक उपक्रम है, जो व्यवसाय के साथ-साथ सामाजिक प्रतिबद्धता के अंतर्गत शैक्षणिक छात्रवृत्ति योजनाओं का संचालन भी करता है. इसके तहत 10वीं कक्षा, आईटीआई, स्नातक स्तर के इंजीनियरिंग छात्रों को अध्ययन हेतु छात्रवृत्ति उपलब्ध कराई जाती है, ताकि प्रतिभावान छात्रों को धनाभाव में स्कूल या कॉलेज न छोड़ना पड़े. वे बेहतर शिक्षा प्राप्त कर अपने और देश के निर्माण में अपना सहयोग प्रदान कर सकें.

इंडियन ऑयल ने छात्रवृत्ति के लिए विषयवार एक अवधि तय कर रखी है. इसमें 10वीं 2 पाठ्यक्रमों, आईटीआई में अध्ययनरत कुल 2000 छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती है. वहीं इंजीनियरिंग करने वाले स्नातक के कुल 300 छात्रों को राज्यवार विभाजित जोन दक्षिण, उत्तर, पश्चिम और पूर्व के आधार पर चयन कर छात्रवृत्ति उपलब्ध कराई जाती है. इस योजना अंतर्गत छात्रों को विशेष बोनस भी दिया जाता है. जब 10वीं कक्षा में शीर्ष दस छात्रों की मेरिट सूची में या स्नातक स्तर पर शीर्ष तीन स्थानों में छात्र जगह बनाने में कामयाब होता है तब इंडियन ऑयल द्वारा स्वयं छात्रों को आमंत्रित कर दस हजार रूपये बोनस राशि के रूप में प्रदान किये जाते हैं.

इंडियन ऑयल की इस छात्रवृत्ति हेतु आवेदन करने के लिए विभिन्न श्रेणियों की नियम व शर्ते भिन्न-भिन्न हैं. इस संस्थान की वेबसाइट पर या निम्न लिंक पर http:www.iocl.com/Aboutus/Scholarships.aspx छात्रवृत्ति से जुड़ी अन्य जानकारियां प्राप्त की जा सकती है.

महिला वैज्ञानिक प्रोत्साहन कार्यक्रम : भारत सरकार के डिपार्टमेंट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी द्वारा उन महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रम का संचालन किया जाता है, जिन्होंने किसी वजह से (जैसे-पारिवारिक जिम्मेदारी, विवाह या अन्य कारण) विज्ञान तथा तकनीकी विषयों को पढ़ने के बाद या इस क्षेत्र में कार्य करने के बाद बीच में ही छोड़ दिया हो. ऐसी महिलायें जो अपनी उम्र के 30-50 के बीच के दशक में हो और फिर से विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र में कार्य करना चाहती हो तो वे इस क्षेत्र में आगे काम कर सकती हैं. विज्ञान एवं तकनीकी विभाग की ओर से चलाये जा रहे इस प्रोग्राम को तीन भागों में विभाजित किया गया है. जो निम्न हैं -

1. मूलभूत/व्यवहारिक विज्ञान में शोध हेतु (डब्ल्यूएसओ-ए)
2. विज्ञान एवं तकनीक आधारित सामाजिक प्रोग्राम में शोध हेतु (डब्ल्यूओएस-बी)
3. स्वरोजगार हेतु (डब्ल्यूओएस-सी)

इन सभी स्कॉलरशिपों का एकमात्र उद्देश्य महिलाओं को विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में आगे लाना है. विशेषकर वे महिलायें जिनके पास वर्तमान में कोई नियमित रोजगार नहीं है.

1. महिला वैज्ञानिक योजना (डब्ल्यूओएस-ए/WOS-A)

इस योजना के अंतर्गत विज्ञान और इंजीनियरिंग के क्षेत्र

में शोध करने में रुचि रखने वाली महिलाओं को प्रोत्साहन दिया जाता है. योजना का लाभ लेने के लिए आवेदन का शोध संबंधी प्रस्ताव प्रस्तुत करना होता है. इसके लिए आवश्यक है कि प्रस्ताव किसी अकादमी/शोध विभाग के साथ प्रस्तुत किया जाये. विभाग द्वारा तीन वर्षीय शोध के कार्यक्रम अंतर्गत पीएचडी डिग्री धारक आवेदक को 23 लाख तक का अनुदान और एमएससी करने वाली आवेदके को 20 लाख की अनुदान राशि में शोध कार्यक्रम के अंतर्गत उपयोग आने वाले सभी उपकरण, यात्रा भत्ता, आकस्मिक निधि तथा अन्य खर्च शामिल हैं.

2. महिला वैज्ञानिक योजना (डब्ल्यूओएस-बी /WOS-B)

इस योजना के अंतर्गत भी कैरियर के बीच में विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्र छोड़ देने वाली महिलाओं को फिर से जोड़ने हेतु अवसर प्रदान किया जाता है. ऐसी महिलाओं को विभाग द्वारा प्रशिक्षण भी दिया जाता है ताकि वे समझ सकें कि परियोजना कैसे बनाई जाती है और उसका अनुपालन किस तरह से किया जाता है.

यह योजना दो भागों में विभाजित है.

1- इटर्नशिप प्रतिरूप - वे महिला आवेदक जिन्हें परियोजना कार्य का कोई अनुभव नहीं होता है. उनके लिये विशेषतौर पर एक साल का प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया जाता है. जब प्रशिक्षणार्थी परियोजना प्रस्ताव बनाने, विज्ञान, तकनीक का उपयोग करने और अन्य कार्यों में

सक्षम हो जाता है. तब उन्हें एक परियोजना प्रस्ताव बनाकर समिति को प्रस्तुत करना होता है जिस पर चयन समिति द्वारा वित्तीय सहायता देने संबंधी निर्णय लिया जाता है.

2. परियोजना प्रतिरूप - वे महिला आवेदक जिन्होंने विज्ञान में स्नात्कोत्तर या पीएचडी किया हो और जिन्हे पहले से ही शोध संबंधी अनुभव हो. उन्हे वर्तमान शोध आधारित फैलोशिप स्कीम में शामिल किया जाता है.

इस योजनांतर्गत शोधार्थियों को दोनों प्रतिरूपों के आधार पर अलग-अलग वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है. इंटर्नशिप प्रतिरूप अंतर्गत एमएससी डिग्री वाली महिला आवेदक को रूपये 18000 प्रतिमाह और पीएचडी आवेदक को रूपये 25000 प्रतिमाह प्रदान किया जाता हैं. परियोजना के अंतर्गत आवेदक की शिक्षा और अनुभव के आधार पर रूपये 18000-35000 की राशि प्रतिमाह दी जा सकती है.

3. महिला वैज्ञानिक योजना (डब्ल्यूओएस-सी/WOS-C) इस श्रेणी में विशेष रूप से महिलाओं को स्व-रोजगार स्थापित करने या उनकी तकनीकी क्षमताओं को विकसित करते हुए उद्यम स्थापित करने के उद्देश्य से वित्तीय सहायता दी जाती है. इसके लिये महिला आवेदक को पेटेंटिंग, प्रुफ रीडिंग, विज्ञान पत्रकारिता, तकनीकी अनुवाद, क्लीनीकल पैथोलॉजी लैब, मेडिकल ट्रांसक्रिप्शन आदि का ज्ञान होना बेहद जरूरी है. इसी के आधार पर वे इनमें से कोई भी कार्य कर सकती हैं. इस योजना का उद्देश्य ऐसी महिलाओं का समूह स्थापित करना है जो दिये गये विषयों में कार्य करने में सक्षम हों.

इन सभी स्कॉलरशिप के लिए आवश्यक योजना तथा अन्य महत्वपूर्ण जानकारी निम्न लिंक www.dst.gov.in/scientific-programme/women-scientists.htm पर प्राप्त की जा सकती है.

लारियल्स वुमन्स अवार्ड : वे महिलाएं जो विज्ञान के क्षेत्र में अपना कॅरियर बनाना चाहती हैं. उनके लिए लारियल्स द्वारा छात्रवृत्ति प्रोग्राम का संचालन किया जाता है. इसकी शुरूआत 2003 में की गई थी ताकि महिलायें बिना किसी आर्थिक दिक्कत के विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ सकें. इस छात्रवृत्ति योजनांतर्गत जिन महिलाओं का चयन होता है, वे देश के किसी भी विश्वविद्यालय या कॉलेज से अध्ययन कर सकती हैं. अध्ययन के दौरान कॉलेज या विश्वविद्यालय की फीस लारियल्स द्वारा उपलब्ध कराई जाती है. इस छात्रवृत्ति के लिये वे ही महिलायें आवेदन कर सकती हैं जिन्होंने बारहवीं कक्षा में विज्ञान विषय लेकर अध्ययन किया हो और पीसीएम/पीसीबी में 85 प्रतिशत अंक लाये हों. वर्तमान में जो महिलायें स्नातक कर चुकी हैं वे ही इस स्कॉलरशिप के लिए आवेदन कर सकती हैं. स्कॉलरशिप से संबंधित और अधिक जानकारी www.foryoungwomeninscience.com से प्राप्त की जा सकती है.

इस तरह सरकार तथा निजी संस्थाओं द्वारा विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र में प्रतिभाशाली छात्रों को बढ़ावा देने के लिए हरसंभव प्रयास किये जा रहे हैं. कोई भी छात्र इन छात्रवृत्तियों का लाभ ले सकता है. इनके अतिरिक्त भी कई और योजनायें छात्रहित में संचालित हो रही हैं, जिनके बारे में इंटरनेट पर जानकारी प्राप्त की जा सकती है.

सम्पर्क : **ए-16 गौतम नगर, निवेदिता हॉस्पिटल के पास, भोपाल, मध्यप्रदेश, पिन कोड-462 023**

आओ जानें प्राचीन भारतीय विज्ञान

महान गणितज्ञ आर्यभट

सुश्री प्राची कनुश्री, बेंगलुरू

अनुलोमगतिर्नौस्थः पश्यत्यचलं विलोमगं यद्वत्।
अचलानि भानि तद्वत् समपश्चिमगानि लंकायाम्।।

(आर्यभटीय, गोलपाद,श्लोक 9)

(अर्थ - नाव में बैठा हुआ मनुष्य जब प्रवाह के साथ आगे बढ़ता है, तब वह समझता है कि अचर वृक्ष, पाषाण, पर्वत आदि पदार्थ उल्टी गति से जा रहे हैं. उसी प्रकार गतिमान पृथ्वी पर से स्थिर नक्षत्र भी उलटी गति से जाते हुए दिखाई देते हैं.)

आज से लगभग 1600 वर्ष पूर्व इस सापेक्षिता को भारतीय वैज्ञानिक ऋषि आर्यभट ने अपने लेखन में इंगित किया था. जिसको बाद में गैलिलियो, मैस प्लंक और आइंसटाइन ने आधुनिक जामा पहना कर अपने नाम कर लिया.

आर्यभट ने सर्वप्रथम यह सिद्ध किया कि पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमती है. इन्होंने सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग को समान माना है. इनके अनुसार एक कल्प में 14 मन्वंतर और एक मन्वंतर में 72 महायुग (चतुर्युग) तथा एक चतुर्युग में सतयुग, द्वापर, त्रेता और कलियुग को समान माना है.

हमने विद्यालय में अंक गणित, बीज गणित, रेखा गणित, त्रिकोणमिति अवश्य पढी होगी. किंतु क्या हमको यह पता है कि इन सब क्षेत्रों में हमारे देश के ऋषि मुनि सबसे आगे थे. किंतु दुर्भाग्यवश हम अपनी धरोहर को सम्भाल नहीं सके और अंगेजों ने हमारे प्राचीन ग्रंथों की नकल कर अपने नाम कर लिया. ऐसे ही एक गणितज्ञ खगोलशास्त्री हुये हैं आर्यभट जिनके जन्म के वास्तविक स्थान के बारे में विवाद है. यद्यपि आर्यभट के जन्म के वर्ष का आर्यभटीय में स्पष्ट उल्लेख है. कुछ मानते हैं कि वे नर्मदा और गोदावरी के मध्य स्थित क्षेत्र में पैदा हुए थे, जिसे अश्माका के रूप में जाना जाता था और वे अश्माका की पहचान मध्य भारत से करते हैं जिसमे महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश शामिल है, हालांकि आरंभिक बौद्ध ग्रन्थ अश्माका को दक्षिण में, दक्षिणापथ या दक्खन के रूप में वर्णित करते हैं, जबकि अन्य ग्रन्थ वर्णित करते हैं कि अश्माका के लोग अलेक्जेंडर से लड़े होंगे, इस हिसाब से अश्माका को उत्तर की तरफ और आगे होना चाहिए. एक अन्य अध्ययन के अनुसार आर्यभट, केरल के चाम्रवत्तम (10 उत्तर 51,75 पूर्व 45) के निवासी थे. अध्ययन के अनुसार अश्माका एक जैन प्रदेश था जो कि श्रवणबेलगोल के चारों तरफ फैला हुआ था और यहाँ के पत्थर के खम्बों के कारण इसका नाम अश्माका पड़ा. हालाँकि ये बात काफी हद तक निश्चित है कि वे किसी न किसी समय कुसुमपुरा उच्च शिक्षा के लिए गए थे और कुछ समय के लिए वहां रहे भी थे. भास्कर (629 ई.) ने कुसुमपुरा की पहचान पाटलिपुत्र (आधुनिक पटना) के रूप में की है. गुप्त साम्राज्य के अन्तिम दिनों में वे वहां रहा करते थे. यह वह समय था जिसे भारत के स्वर्णिम युग के रूप में जाना जाता है, विष्णुगुप्त के पूर्व बुद्धगुप्त और कुछ छोटे राजाओं के साम्राज्य के दौरान उत्तर पूर्व में हूणों का आक्रमण शुरू हो चुका था.

आर्यभट अपनी खगोलीय प्रणालियों के लिए सन्दर्भ के रूप में श्रीलंका का उपयोग करते थे और आर्यभटीय में अनेक अवसरों पर श्रीलंका का उल्लेख किया है.

पाई का अविष्कार

चतुरधिकं शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्राणाम।
अयुतद्वयविष्कम्भस्यासन्नो वृत्त-परिणाहः।।

(आर्यभटीय, गणितपाद, श्लोक 10)

100 में चार जोड़ें, आठ से गुणा करें और फिर 62000 जोड़ें. इस नियम से 20000 परिधि के एक वृत्त का व्यास ज्ञात किया जा सकता है.

(100 + 4) x 8 + 62000/20000 = 3.1416

इसके अनुसार व्यास और परिधि का अनुपात ((4 +

100) x 8 + 62000) / 20000 = 3.1416 है, जो पाँच महत्वपूर्ण आंकड़ों तक बिलकुल सटीक है.

आर्यभटीयम (गणितपाद) : आर्यभट ने आसन्न (निकट पहुंचना), पिछले शब्द के ठीक पहले आने वाला, शब्द की व्याख्या की व्याख्या करते हुए कहा है कि यह न केवल एक सनिन्कटन है, वरन यह कि मूल्य अतुलनीय (या इर्रेशनल) है. यदि यह सही है, तो यह एक अत्यन्त परिष्कृत दृष्टिकोण है, क्योंकि यूरोप में पाई की तर्कहीनता का सिद्धांत लैम्बर्ट द्वारा केवल 1761 में ही सिद्ध हो पाया था. आर्यभटीय के अरबी में अनुवाद के पश्चात् (पूर्व.820 ई.) बीजगणित पर अल ख्वारिज्मी की पुस्तक में इस सनिन्कटन का उल्लेख किया गया था.

उन्होंने एक ओर गणित में पूर्ववर्ती आर्किमिडीज़ से भी अधिक सही तथा सुनिश्चित पाई के मान को निरूपित किया तो दूसरी ओर खगोलविज्ञान में सबसे पहली बार उदाहरण के साथ यह घोषित किया गया कि स्वयं पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है.

आर्यभट द्वारा रचित तीन ग्रंथों की जानकारी आज भी उपलब्ध है. ये है दशगीतिका, आर्यभटीय और तंत्र. लेकिन जानकारों के अनुसार उन्होने और एक ग्रंथ लिखा था- 'आर्यभट सिद्धांत'. इस समय उसके केवल 34 श्लोक ही उपलब्ध हैं. उनके इस ग्रंथ का सातवे शतक में व्यापक उपयोग होता था. लेकिन इतना उपयोगी ग्रंथ लुप्त कैसे हो गया इस विषय में कोई निश्चित जानकारी नहीं मिलती. उन्होंने आर्यभटीय नामक महत्वपूर्ण ज्योतिष ग्रन्थ लिखा, जिसमें वर्गमूल, घनमूल, समान्तर श्रेणी तथा विभिन्न प्रकार के समीकरणों का वर्णन है. उन्होंने अपने आर्यभटीय नामक ग्रन्थ में कुल 3 पृष्ठों में समा सकने वाले 33 श्लोकों में गणितविषयक सिद्धान्त तथा 5 पृष्ठों में 75 श्लोकों में खगोल-विज्ञान विषयक सिद्धान्त तथा इसके लिये यन्त्रों का भी निरूपण किया. आर्यभट ने अपने इस छोटे से ग्रन्थ में अपने से पूर्ववर्ती तथा पश्चाद्वर्ती देश के तथा विदेश के सिद्धान्तों के लिये भी क्रान्तिकारी अवधारणाएँ उपस्थित कीं थी. उनकी प्रमुख कृति, आर्यभटीय, गणित और खगोल विज्ञान का एक संग्रह है, जिसे भारतीय गणितीय साहित्य में बड़े पैमाने पर उद्धृत किया गया है और जो आधुनिक समय में भी अस्तित्व में है. आर्यभटीय के गणितीय भाग में अंकगणित, बीजगणित, सरल त्रिकोणमिति और गोलीय त्रिकोणमिति शामिल हैं. इसमे सतत भिन्न (कँटीन्यूड फ्रेक्शन्स), द्विघात समीकरण (क्वाड्रेटिक इक्वेशंस), घात श्रृंखला के योग (सम्स ऑफ पावर सीरीज़) और ज्याओं की एक तालिका (Table of Sines) शामिल हैं.

आर्य-सिद्धांत, खगोलीय गणनाओं पर एक कार्य है जो अब लुप्त हो चुका है, इसकी जानकारी हमें आर्यभट के समकालीन वराहमिहिर के लेखनों से प्राप्त होती है, साथ ही साथ बाद के गणितज्ञों और टिप्पणीकारों के द्वारा भी मिलती है जिनमें शामिल हैं ब्रह्मगुप्त और ऐसा प्रतीत होता है कि ये कार्य पुराने सूर्य सिद्धांत पर आधारित है और आर्यभटीय के सूर्योदय की अपेक्षा इसमें मध्यरात्रि-दिवस-गणना का उपयोग किया गया है. इसमें अनेक खगोलीय उपकरणों का वर्णन शामिल है, जैसे कि नोमोन(शंकु-यन्त्र), एक परछाई यन्त्र (छाया-यन्त्र), संभवतः कोण मापी उपकरण, अर्धवृत्ताकार और वृत्ताकार (धनुर-यन्त्र / चक्र-यन्त्र), एक बेलनाकार छड़ी यस्ती-यन्त्र, एक छत्र-आकर का उपकरण जिसे छत्र-यन्त्र कहा गया है और कम से कम दो प्रकार की जल घड़ियाँ- धनुषाकार और बेलनाकार.

एक तीसरा ग्रन्थ जो अरबी अनुवाद के रूप में अस्तित्व में है, अल न्त्फ़ या अल नन्फ़ है, आर्यभट के एक अनुवाद के रूप में दावा प्रस्तुत करता है, परन्तु इसका संस्कृत नाम अज्ञात है. संभवतः 9 वी सदी के अभिलेखन में, यह फारसी विद्वान और भारतीय इतिहासकार अबू रेहान अल-बिरूनी द्वारा उल्लेखित किया गया है. आर्यभट के कार्य के प्रत्यक्ष विवरण सिर्फ आर्यभटीय से ही ज्ञात हैं. आर्यभटीय नाम बाद के टिप्पणीकारों द्वारा दिया गया है, आर्यभट ने स्वयं इसे नाम नही दिया होगा; यह उल्लेख उनके शिष्य भास्कर प्रथम ने अश्मकतंत्र या अश्माका के लेखों में किया है. इसे कभी कभी आर्य-शत-अष्ट (अर्थात आर्यभट के 108)- जो की उनके पाठ में छंदों की संख्या है- के नाम से भी जाना जाता है. यह सूत्र साहित्य के समान बहुत ही संक्षिप्त शैली में लिखा गया है, जहाँ प्रत्येक पंक्ति एक जटिल प्रणाली को याद करने के लिए सहायता करती है. इस प्रकार, अर्थ की व्याख्या टिप्पणीकारों की वजह से है. समूचे ग्रंथ में 108 छंद है, साथ ही परिचयात्मक 13 अतिरिक्त हैं, इस पूरे को चार पदों अथवा अध्यायों में विभाजित किया गया है :

(1) गीतिकपाद (13 छंद) में समय की बड़ी इकाइयाँ - कल्प, मन्वन्तर, युग, जो प्रारंभिक ग्रंथों से अलग एक ब्रह्माण्ड विज्ञान प्रस्तुत करते हैं जैसे कि लगध का वेदांग ज्योतिष, (पहली सदी ईसवी पूर्व, इनमें जीवाओं (साइन) की तालिका ज्या भी शामिल है जो एक एकल छंद में प्रस्तुत है. एक महायुग के दौरान, ग्रहों के परिभ्रमण के लिए 4.32 मिलियन वर्षों की संख्या दी गयी है.

(2) गणितपाद (33 छंद) में क्षेत्रमिति (क्षेत्र व्यवहार), गणित और ज्यामितिक प्रगति, शंकु/ छायाएँ (शंकु -छाया), सरल, द्विघात, युगपत और अनिश्चित समीकरण (कुट्टक)

का समावेश है.

(3) कालक्रियापाद (25 छंद) : समय की विभिन्न इकाइयाँ और किसी दिए गए दिन के लिए ग्रहों की स्थिति का निर्धारण करने की विधि. अधिक मास की गणना के विषय में (अधिकमास), क्षय-तिथियां. सप्ताह के दिनों के नामों के साथ, एक सात दिन का सप्ताह प्रस्तुत करते हैं.

(4) गोलपाद (50 छंद): आकाशीय क्षेत्र के ज्यामितिक / त्रिकोणमितीय पहलू, क्रांतिवृत्त, आकाशीय भूमध्य रेखा, आसंथि, पृथ्वी के आकार, दिन और रात के कारण, क्षितिज पर राशिचक्रीय संकेतों का बढ़ना आदि की विशेषताएं.

आर्यभटीय ने गणित और खगोल विज्ञान में पद्य रूप में, कुछ नवीनताएँ प्रस्तुत की, जो अनेक सदियों तक प्रभावशाली रहीं. ग्रंथ की संक्षिप्तता की चरम सीमा का वर्णन उनके शिष्य भास्कर प्रथम (भाष्य,600 और) द्वारा अपनी समीक्षाओं में किया गया है और अपने आर्यभटीय भाष्य (1465) में नीलकंठ सोमयाजी द्वारा.

आर्यभट का भारत और विश्व के ज्योतिष सिद्धान्त पर बहुत प्रभाव रहा है. भारत में सबसे अधिक प्रभाव केरल प्रदेश की ज्योतिष परम्परा पर रहा. आर्यभट भारतीय गणितज्ञों में सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं. इन्होंने 120 आर्याछंदों में ज्योतिष शास्त्र के सिद्धांत और उससे संबंधित गणित को सूत्ररूप में अपने आर्यभटीय ग्रंथ में लिखा है. आर्यभट ने ज्योतिषशास्त्र के आजकल के उन्नत साधनों के बिना जो खोज की थी, उनकी महत्ता है. आर्यभट के अनुसार किसी वृत्त की परिधि और व्यास का संबंध 62,832 : 20,000 आता है, जो चार दशमलव स्थान तक शुद्ध है. आर्यभट ने बड़ी-बड़ी संख्याओं को अक्षरों के समूह से निरूपित करने का उत्पन्न वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया है.

गणित, क्षेत्रमिति और त्रिकोणमिति

स्थानीय मान प्रणाली और शून्य

स्थान-मूल्य अंक प्रणाली, जिसे सर्वप्रथम तीसरी सदी की बख्शाली पाण्डुलिपि में देखा गया, उनके कार्यों में स्पष्ट रूप से विद्यमान थी. उन्होंने निश्चित रूप से प्रतीक का उपयोग नहीं किया, परन्तु फ्रांसीसी गणितज्ञ जार्ज इफ्रह की दलील है कि रिक्त गुणांक के साथ, दस की घात के लिए एक स्थान धारक के रूप में शून्य का ज्ञान आर्यभट के स्थान-मूल्य अंक प्रणाली में निहित था. हालांकि, आर्यभट ने ब्राह्मी अंकों का प्रयोग नहीं किया था; वैदिक काल से चली आ रही संस्कृत परंपरा को जारी रखते हुए उन्होंने संख्या को निरूपित करने के लिए वर्णमाला के अक्षरों का उपयोग किया, मात्राओं (जैसे ज्याओं की तालिका) को स्मरक के रूप में व्यक्त किया.

साइन (ज्या), कोसाइन (कोज्या) के साथ ही, वरसाइन (उक्रमाज्या) की उनकी परिभाषा, और विलोम साइन (उत्क्रम ज्या), ने त्रिकोणमिति की उत्पत्ति को प्रभावित किया. वे पहले व्यक्ति भी थे जिन्होंने साइन और वरसाइन (1- कोसेक्स) तालिकाओं को, 0 डिग्री से 90 डिग्री तक 3.75° अंतरालों में, 4 दशमलव स्थानों की सूक्ष्मता तक निर्मित किया. वास्तव में 'साइन' और 'कोसाइन' के आधुनिक नाम आर्यभट द्वारा प्रचलित ज्या और कोज्या शब्दों के ग़लत (अपभ्रंश) उच्चारण हैं. उन्हें अरबी में जिबा और कोजिबा के रूप में उच्चारित किया गया था. फिर एक अरबी ज्यामिति पाठ के लैटिन में अनुवाद के दौरान क्रेमोना के जेरार्ड द्वारा इनकी ग़लत व्याख्या की गयी; उन्होंने जिबा के लिए अरबी शब्द 'जेब' लिया जिसका अर्थ है 'पोशाक में एक तह', (एल साइनस (सी.1150)). आर्यभट ने अपने काम में ज्या (साइन) के विषय में चर्चा की है और उसको नाम दिया है अर्ध-ज्या इसका शाब्दिक अर्थ है 'अर्ध-तंत्री'. आसानी की वजह से लोगों ने इसे ज्या कहना शुरू कर दिया. जब अरबी लेखकों द्वारा उनके काम का संस्कृत से अरबी में अनुवाद किया गया, तो उन्होंने इसको जिबा कहा (ध्वन्यात्मक समानता के कारणवश). चूँकि, अरबी लेखन में, स्वरों का इस्तेमाल बहुत कम होता है, इसलिए इसका और संक्षिप्त नाम पड़ गया जेब. जब बाद के लेखकों को ये समझ में आया कि जब जिबा का ही संक्षिप्त रूप है, तो उन्होंने वापिस जिबा का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया. जिबा का अर्थ है 'खोह' या 'खाई' (अरबी भाषा में जिबा का एक तकनीकी शब्द के अलावा कोई अर्थ नहीं है). बाद में बारहवीं सदी में, जब क्रीमोना के घेरादी ने इन लेखनों का अरबी से लैटिन भाषा में अनुवाद किया, तब उन्होंने अरबी जिबा की जगह उसके लेटिन समकक्ष 'साइनस' को डाल दिया, जिसका शाब्दिक अर्थ 'खोह' या खाई' ही है. और उसके बाद अंग्रेजी में, 'साइनस' ही 'साइन' बन गया.

आर्यभट की खगोलीय गणना की भी विधियां भी बहुत प्रभावशाली थी. त्रिकोणमितिक तालिकाओं के साथ, वे इस्लामी दुनिया में व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाती थी. और अनेक अरबी खगोलीय तालिकाओं (जिज) की गणना के लिए इस्तेमाल की जाती थी. विशेष रूप से अरबी, स्पेन वैज्ञानिक अल-झर्काली (11वीं सदी) के कार्यों में पाई जाने वाली खगोलीय तालिकाओं का लैटिन में तोलेडो की तालिकाओं (12वीं सदी) के रूप में अनुवाद किया गया और ये यूरोप में सदियों तक सर्वाधिक सूक्ष्म पंचांग के रूप में इस्तेमाल में रही.

आर्यभट और उनके अनुयायियों द्वारा की गयी तिथि गणना पंचांग अथवा हिंदू तिथिपत्र निर्धारण के व्यावहारिक

उद्देश्यों के लिए भारत में निरंतर इस्तेमाल में रही है, इन्हें इस्लामी दुनिया को भी प्रेषित किया गया, जहाँ इनसे जलाली तिथिपत्र का आधार तैयार किया गया, जिसे 1073 में उमर खय्याम सहित कुछ खगोलविदों ने प्रस्तुत किया, जिसके संस्करण (1925 में संशोधित) आज ईरान और अफगानिस्तान में राष्ट्रीय कैलेंडर के रूप में प्रयोग में है. जलाली तिथिपत्र अपनी तिथियों का आकलन वास्तविक सौर पारगमन के आधार पर करता हैं, जैसा आर्यभट (और प्रारंभिक सिद्धांत कैलेंडर में था).इस प्रकार के तिथि पत्र में तिथियों की गणना के लिए एक पंचांग की आवश्यकता होती है. यद्यपि तिथियों की गणना करना कठिन था, पर जलाली तिथिपत्र में ग्रेगोरी तिथिपत्र से कम मौसमी त्रुटियां थी.

गणितपाद 6 में, आर्यभट ने त्रिकोण के क्षेत्रफल को इस प्रकार बताया है-

त्रिभुजस्य फलाशारिरम समदलाकोटि भुजर्धसमवर्गः

इसका अनुवाद हैः एक त्रिकोण के लिए, अर्ध-पक्ष के साथ लम्ब का परिणाम क्षेत्रफल है.[10]

अनिश्चित समीकरण : प्राचीनकाल से भारतीय गणितज्ञों की विशेष रूचि की एक समस्या रही है उन समीकरणों के पूर्णांक हल ज्ञात करना जो $ax + b = cy$ स्वरूप में होती है, एक विषय जिसे वर्तमान समय में डायोफैंटाइन समीकरण के रूप में जाना जाता है. यहाँ आर्यभटीय पर भास्कर की व्याख्या से एक उदाहरण देते हैः

वह संख्या ज्ञात करो जिसे 8 से विभाजित करने पर शेषफल के रूप में 5 बचता है, 9 से विभाजित करने पर शेषफल के रूप में 4 बचता है, 7 से विभाजित करने पर शेषफल के रूप में 1 बचता है.

अर्थात, बताएं $N = 8x + 5 = 9y + 4 = 7z + 1$. इससे N के लिए सबसे छोटा मान 85 निकलता है. सामान्य तौर पर, डायोफैंटाइन समीकरण कठिनता के लिए बदनाम थे. इस तरह के समीकरणों की व्यापक रूप से चर्चा प्राचीन वैदिक ग्रन्थ सुल्ब सूत्र में है, जिसके अधिक प्राचीन भाग 800 ई.पू. तक पुराने हो सकते हैं. ऐसी समस्याओं के हल के लिए आर्यभट की विधि को कुट्टक विधि कहा गया है. कुट्टक का अर्थ है पीसना, अर्थात छोटे छोटे टुकडों में तोड़ना और इस विधि में छोटी संख्याओं के रूप में मूल खंडों को लिखने के लिए एक पुनरावर्ती कलनविधि का समावेश था. आज यह कलनविधि, 621 ईस्वी पश्चात में भास्कर की व्याख्या के अनुसार, पहले क्रम के डायोफैंटाइन समीकरणों को हल करने के लिए मानक पद्धति है, और इसे अक्सर आर्यभट एल्गोरिद्म के रूप में जाना जाता है. डायोफैंटाइन समीकरणों का इस्तेमाल क्रिप्टोलोजी में होता है और आरएसए सम्मलेन, 2006 ने अपना ध्यान कुट्टक विधि और सुल्वसूत्र के पूर्व के कार्यों पर केन्द्रित किया.

बीजगणित : आर्यभटीय में आर्यभट ने वर्गों और घनों की श्रृंखला के सुरुचिपूर्ण परिणाम प्रदान किये हैं.

सौर प्रणाली की गतियाँ : प्रतीत होता है कि आर्यभट यह मानते थे कि पृथ्वी अपनी धुरी की परिक्रमा करती है. यह श्रीलंका को सन्दर्भित एक कथन से ज्ञात होता है, जो तारों की गति का पृथ्वी के घूर्णन से उत्पन्न आपेक्षिक गति के रूप में वर्णन करता है.

अनुलोम-गतिस् नौ-स्थस् पश्यति अचलम् विलोम-गम् यद्-वत् .

अचलानि भानि तद्-वत् सम-पश्चिम-गानि लङ्कयाम् ? (आर्यभटीय गोलपाद 9)

जैसे एक नाव में बैठा आदमी आगे बढ़ते हुए स्थिर वस्तुओं को पीछे की दिशा में जाते देखता है, बिल्कुल उसी तरह श्रीलंका में (अर्थात भूमध्य रेखा पर) लोगों द्वारा स्थिर तारों को ठीक पश्चिम में जाते हुए देखा जाता है.

अगला छंद तारों और ग्रहों की गति को वास्तविक गति के रूप में वर्णित करता हैः

उदय-अस्तमय-निमित्तम् नित्यम् प्रवहेण वायुना क्षिप्तस्. लङ्क-सम-पश्चिम-गस् भ-पञ्जरस् स-ग्रहस् भ्रमति ?

(आर्यभटीय गोलपाद 10)

'उनके उदय और अस्त होने का कारण इस तथ्य की वजह से है कि प्रोवेक्टर हवा द्वारा संचालित गृह और एस्टेरिस्म्स चक्र श्रीलंका में निरंतर पश्चिम की तरफ चलायमान रहते है.

लंका (श्रीलंका) यहाँ भूमध्य रेखा पर एक सन्दर्भ बिन्दु है, जिसे खगोलीय गणना के लिए मध्याह्न रेखा के सन्दर्भ में समान मान के रूप में ले लिया गया था.

आर्यभट ने सौर मंडल के एक भूकेंद्रीय मॉडल का वर्णन किया है, जिसमे सूर्य और चन्द्रमा गृहचक्र द्वारा गति करते हैं, जो कि परिक्रमा करता है पृथ्वी की. इस मॉडल में, जो पाया जाता है पितामहसिद्धान्त (ई. 425), प्रत्येक ग्रहों की गति दो ग्रहचक्रों द्वारा नियंत्रित है, एक छोटा मंद (धीमा) ग्रहचक्र और एक बड़ा शीघ्र (तेज) ग्रहचक्र. पृथ्वी से दूरी के अनुसार ग्रहों का क्रम इस प्रकार है : चंद्रमा, बुध, शुक्र, सूरज, मंगल, बृहस्पति, शनि और नक्षत्र . ग्रहों की स्थिति और अवधि की गणना समान रूप से गति करते हुए बिन्दुओं से सापेक्ष के रूप में की गयी थी, जो बुध और शुक्र के मामले में, जो पृथ्वी के चारों ओर औसत सूर्य के समान गति से घूमते हैं और मंगल, बृहस्पति और शनि के मामले में, जो राशिचक्र में पृथ्वी के चारों ओर अपनी विशिष्ट गति से गति करते हैं. खगोल विज्ञान के अधिकांश इतिहासकारों के अनुसार

यह द्वि ग्रहचक्र वाला मॉडल टॉलेमी के पहले के ग्रीक खगोल विज्ञान के तत्वों को प्रदर्शित करता है. आर्यभट के मॉडल के एक अन्य तत्व सिग्रोका, सूर्य के संबंध में बुनियादी ग्रहों की अवधि, को कुछ इतिहासकारों द्वारा एक अंतर्निहित सूर्य केन्द्रित मॉडल के चिन्ह के रूप में देखा जाता है.

ग्रहण : उन्होंने कहा कि चंद्रमा और ग्रह सूर्य के परावर्तित प्रकाश से चमकते हैं. मौजूदा ब्रह्माण्डविज्ञान से अलग, जिसमे ग्रहणों का कारक छद्म ग्रह निस्पंद बिन्दु राहू और केतु थे, उन्होंने ग्रहणों को पृथ्वी द्वारा डाली जाने वाली और इस पर गिरने वाली छाया से सम्बद्ध बताया. इस प्रकार चंद्रगहण तब होता है जब चाँद पृथ्वी की छाया में प्रवेश करता है (छंद गोला. 37) और पृथ्वी की इस छाया के आकार और विस्तार की विस्तार से चर्चा की (छंद गोला. 38-48) और फिर ग्रहण के दौरान ग्रहण वाले भाग का आकार और इसकी गणना. बाद के भारतीय खगोलविदों ने इन गणनाओं में सुधार किया, लेकिन आर्यभट की विधियों ने प्रमुख सार प्रदान किया था. यह गणनात्मक मिसाल इतनी सटीक थी कि 18 वीं सदी के वैज्ञानिक गुइलौम ले जेंटिल ने, पांडिचेरी की अपनी यात्रा के दौरान, पाया कि भारतीयों की गणना के अनुसार 30-08-1765 के चंद्रग्रहण की अवधि 41 सेकंड कम थी, जबकि उसके चार्ट (द्वारा, टोबिअस मेयर, 1752) 68 सेकंड अधिक दर्शाते थे. आर्यभट की गणना के अनुसार पृथ्वी की परिधि 39,968.0582 किलोमीटर है, जो इसके वास्तविक मान 40,075.0167 किलोमीटर से केवल 0.2% कम है. यह सनिन्कटन यूनानी गणितज्ञ, एराटोसथेंनस की संगणना के ऊपर एक उल्लेखनीय सुधार था, 200 ई.) जिनका गणना का आधुनिक इकाइयों में तो पता नहीं है, परन्तु उनके अनुमान में लगभग 5-10% की एक त्रुटि अवश्य थी.

नक्षत्रों के आवर्तकाल : समय की आधुनिक अंग्रेजी इकाइयों में जोड़ा जाये तो, आर्यभट की गणना के अनुसार पृथ्वी का आवर्तकाल (स्थिर तारों के सन्दर्भ में पृथ्वी की अवधि) 23 घंटे 56 मिनट और 4.1 सेकंड थी; आधुनिक समय 23:56:4.091 है. इसी प्रकार, उनके हिसाब से पृथ्वी के वर्ष की अवधि 365 दिन 6 घंटे 12 मिनट 30 सेकंड, आधुनिक समय की गणना के अनुसार इसमें 3 मिनट 20 सेकंड की त्रुटि है. नक्षत्र समय की धारण उस समय की अधिकतर अन्य खगोलीय प्रणालियों में ज्ञात थी, परन्तु संभवतः यह संगणना उस समय के हिसाब से सर्वाधिक शुद्ध थी.

सूर्य केंद्रीयता : आर्यभट का दावा था कि पृथ्वी अपनी ही धुरी पर घूमती है और उनके ग्रह सम्बन्धी ग्रहचक्र मॉडलों के कुछ तत्व उसी गति से घूमते हैं जिस गति से सूर्य के चारों ओर ग्रह घूमते हैं. इस प्रकार ऐसा सुझाव दिया जाता है कि आर्यभट की संगणनाएँ अन्तर्निहित सूर्य केन्द्रित मॉडल पर आधारित थीं, जिसमे ग्रह सूर्य का चक्कर लगाते हैं.[18][19. एक समीक्षा में इस सूर्य केन्द्रित व्याख्या का विस्तृत खंडन है. यह समीक्षा बी.एल. वान डर वार्डेन की एक किताब का वर्णन इस प्रकार करती हैं 'यह किताब भारतीय गृह सिद्धांत के विषय में अज्ञात है और यह आर्यभट के प्रत्येक शब्द का सीधे तौर पर विरोध करता है,' हालाँकि कुछ लोग यह स्वीकार करते हैं की आर्यभट की प्रणाली पूर्व के एक सूर्य केन्द्रित मॉडल से उपजी थी जिसका ज्ञान उनको नहीं था.[21. यह भी दावा किया गया है कि वे ग्रहों के मार्ग को अंडाकार मानते थे, हालाँकि इसके लिए कोई भी प्राथमिक साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है.[22] हालाँकि सामोस के एरिस्तार्चुस (तीसरी शताब्दी ई.पू.) और कभी कभार पोन्टस के हेराक्लिड्स (चौथी शताब्दी ई.पू.) को सूर्य केन्द्रित सिद्धांत की जानकारी होने का श्रेय दिया जाता है, प्राचीन भारत में ज्ञात ग्रीक खगोलशास्त्र(पौलिसा सिद्धांत - संभवतः अलेक्ज़न्द्रिया के किसी पॉल द्वारा) सूर्य केन्द्रित सिद्धांत के विषय में कोई चर्चा नहीं करता है.

भारतीय खगोलीय परंपरा में आर्यभट के कार्य का बड़ा प्रभाव था और अनुवाद के माध्यम से इसने कई पड़ोसी संस्कृतियों को प्रभावित किया. इस्लामी स्वर्ण युग (ई. 820), के दौरान इसका अरबी अनुवाद विशेष प्रभावशाली था. उनके कुछ परिणामों को अल-ख्वारिज्मी द्वारा उद्धृत किया गया है और 10 वीं सदी के अरबी विद्वान अल-बिरूनी द्वारा उन्हें सन्दर्भित किया गया गया है, जिन्होंने अपने वर्णन में लिखा है कि आर्यभट के अनुयायी मानते थे कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है.

भारत के प्रथम उपग्रह आर्यभट, को उनका नाम दिया गया.चंद्र खड्ड आर्यभट का नाम उनके सम्मान स्वरुप रखा गया है. खगोल विज्ञान, खगोल भौतिकी और वायुमंडलीय विज्ञान में अनुसंधान के लिए भारत में नैनीताल के निकट एक संस्थान का नाम आर्यभट प्रेक्षण विज्ञानं अनुसंधान संस्थान (एआरआईएस) रखा गया है. बैसिलस आर्यभट, इसरो के वैज्ञानिकों द्वारा 2009 में खोजी गयी एक बैक्टीरिया की प्रजाति का नाम उनके नाम पर रखा गया है.

कुल मिलाकर हमको यह जानना ही होगा और मानना ही होगा कि भारत विश्वगुरू ऐसे ही नहीं कहलाता था. भारतवर्ष के महान ऋषिमुनियों ने लगभग हर क्षेत्र में अपना योगदान देकर विश्वविज्ञान की नीव रखी थी.

'सम्पर्क : **सितार, डी.आर.डी.ओ, बेंगलुरू**

गूलर का महत्व

- डॉ.दया शंकर त्रिपाठी

गूलर वृक्ष पर लिखने का हमारा मुख्य उद्देश्य इसके गुणों को उजागर करना है जो एक प्राकृतिक निधि है और जनस्वास्थ्य में अच्छी भूमिका निभाती रही है. यह निर्धनों की स्वास्थ्यरक्षक है और मानव जाति का उपकार करने वाली है. गूलर के उपयोग से अनेक बीमारियों से निःशुल्क रक्षा की जा सकती है. गूलर को उदुम्बर वृक्ष भी कहते हैं. आयुर्वेदीय चिकित्सा ग्रंथों जैसे भावप्रकाश निघण्टु, चरक संहिता, सुश्रुत संहिता एवं अनुभवी आयुर्वेद एवं प्राकृतिक चिकित्सकों ने गूलर और उसके विभिन्न अंगों का जनस्वास्थ्य रक्षा में अनेक उपयोग किया है. गूलर का वृक्ष पर्यावरण शुद्धिकरण के साथ-साथ परिस्थितिक तंत्र में उत्पादकता, खाद्य श्रृंखला एवं विभिन्न प्राणियों को आश्रय प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है. इसके साथ ही यह मृदा संरक्षण, उर्वरकता वृद्धि में भी सहायक है. गूलर के बारे में प्रसिद्ध है कि इसका फल तो सभी ने देखा हैं परन्तु इसका फूल किसी विरले ने ही देखा है. 'गूलर का फूल होना' को कवियों ने अपनी कविताओं में उन स्थानों पर उल्लेख किया है जहां कोई प्रियजन बहुत लंबे समय बाद मिलता है. गूलर के फूल के बारे में एक लोकोक्ति काफी चर्चित है कि जो गूलर का फूल देख लेता है उसके दिन बदल जाते हैं. एक ग्रंथ में लिखा है कि काशी के रहने वाले पंडित काशीनाथ द्विवेदी ने इसके फूल को दो घंटे के लिए देखा था जिसके उन्हें दो लाभ मिले. एक वह सदैव अस्वस्थ रहा करते थे और अब स्वस्थ रहने लगे तथा दूसरा लाभ मिला कि जो क्लिश्ट विषय उनकी समझ में नहीं आते थे उसे आसानी से समझने लगे. उन्होंने उस फूल को अपने एक अन्य मित्र को भी दिखलाया परंतु व उन्हें नहीं दिखलाई पड़े. दूसरी घटना जिला सीतापुर की परसंडी रियासत की है, जहां एक साधारण गृहस्थ व्यक्ति को गूलर का फूल मिला. जिसके प्रभाव से वह अच्छा जमींदार बन गया. उसके बाद उसे एक फूल और मिल गया और वह राजा हो गया. दोनों फूल सोने के छोटे बक्से में काफी दिनों तक रखे हुए थे.

गूलर वृक्ष का वानस्पतिक नाम फाइकस ग्लोमरेटा (सदस्य मोरेसी परिवार) है जिसकी लंबाई 10 से 16 मीटर तक होती है. इसकी पत्तियों का रंग हरा, आकार अण्डाकार और लंबाई 7.5 से 10 सेमी. होती है. इसके फलों का आकार लगभग 2-5 सेमी होता है जो गुच्छे के रूप में मुख्य तना और बड़ी शाखाओं में फलते है. यह सम्पूर्ण भारत में पाया जाता है. इसकी जड़े, छाल, फल, डंठल और पत्तियों में औषधीय गुण भरा पड़ा है. आयुर्वेद के अनुसार इसकी जड़े हाइड्रोफोबिया के उपचार में उपयोगी है. वहीं इसकी छाल स्त्रीरोग विकार और व्रणीय बृहद आंत्र शोध के लिए उत्तम है और शीतलता प्रदान करने वाली है. इसके फलों का उपयोग श्वेतप्रदर, रक्तविकार, जलन, सुस्ती, मूत्र स्राव, कुष्ठ अतिरिक्त स्राव,

नासारक्त स्राव और आंत्र कृमि में लाभप्रद है. इसके पके फलों के ठंडे रस को चीनी और छाल के काढ़े के साथ मिलाकर पीने से रक्तपित का उपचार किया जाता है. यहां तक कि यह मूत्ररोधक होने के कारण इसके पके फल अथवा छाल का काढ़ा मधुमेह में उपयोगी सिद्ध हुआ है. इसकी पत्तियों का काढ़ा गाँठों की सूजन और घाव में उपयोग किया जाता है. गर्भाशय रक्तस्राव, गर्भपात, श्वेतप्रदर और रक़्तप्रदर में इसके छाल का काढ़ा पिलाया जाता है. क्लीवता (नपुंसकता) के उपचार में इसके दूख की मिश्री मिलाकर खिलाने से लाभ मिलता है.

मन्दाग्नि के उपयोग : मंदाग्नि रोगों में गूलर का शर्बत उपयोगी होता है. इससे भूख बढ़ती है. पाचन क्रिया ठीक रहती है और स्वास्थ्य ठीक हो जाता है. गूलर के छोटे-छोटे फलों के बीज को निकाल कर सब्जी बनाई जाती है जो स्वादिष्ट होने के साथ-साथ पाचन तंत्र के लिए बहुत ही लाभदायक है. इसका गुण लवणभास्कर चूर्ण जैसे महापाचक औषधियों के गुणों से भी बढ़कर है. प्रसिद्ध वैद्य चंद्रशेखरधर शर्मा मिश्र अपनी पुस्तक आरोग्य-प्रकाश में लिखते हैं कि मेरी 81 वर्ष की अवस्था में जब सब प्रकार की औषधियां एवं चिकित्सायें निष्प्रभावी हो गई तो मेरी कठिन मंदाग्नि को इसी गूलर की सब्जी ने दूर किया. लिखा है -

गूलर के फल की तरकारी, है लपसी निमकी उपकारी।
इनका सेवन जो नित होवे, सबका दिन-दिन अति हित होवे।।

घाव व फोड़े-फुन्सियों के उपयोग : आयुर्वेद की प्रसिद्ध भावप्रकाश एवं निघंटू के अनुसार गूलर मधुर तथा कसायरसयुक्त. शीतल, रूक्ष, भारी वर्ण को उत्तम करनेवाला है. इसके साथ ही यह घाव को ठीक करने और भरनेवाला तथा पित्त कफ और रक्त विकार को दूर करनेवाला है. चोट लगने, घाव एवं फोड़े-फुन्सियों में भी गूलर के पत्तों का कल्क काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है. इसके पत्तों के कल्क को घावों पर मोटा लेप करते रहना चाहिए और इसे सूखने पर पुनः दूसरा लेप लगा देना चाहिए. इसके कल्क को मवाद व सड़े हुए भाग को साफ करके लेप करना चाहिए. लिखा है -

फोड़े फुन्सी, गिल्टियां, जहरबाद के घाव।
विकृत, भगंदर सैन,कृमि,दूषित,सविष,चकाव॥
प्रतिदिन धोवो घाव को, दे कीड़े कील निकाल।
रगड़-रगड़ कर तूतिया, सड़े मांस का लाल॥
जल मिश्रित हो तूतिया, नहीं तुत्थ का खंड़।
रगडो बिगजे अंश पर, छूटे, घाव प्रचंड॥
विकत घाव पर लेप ही, करे तुत्थ का आप।
विकृत माँस कट जाएगा, छूटेगा उपताप॥

चोट व जलने में उपयोग : चोट लगने एवं आग से जल जाने पर इनके पत्तों का लेप क़ाफी आराम पहुंचाता है. यहां तक कि पशुओं में हुए घावों को भी यह शीघ्रता से ठीक कर देता है. इसके लिए लिखा है-

पीसकर पत्ते चढ़ाएं, आग से जो कुछ जले ।
परपटी जल में तरल कर, वा सरलता से मिले॥
छूट जाएगी जलन, होंगे फफोले भी नहीं।
तुरंत ही मिट जाएंगे, जो घाव भी होंगे कहीं॥

दंत रोग में उपयोग : जिस डंठल में गूलर के फल लगते हैं वह दातून के काम आता है और इसके अन्य भागों की तुलना में अधिक लाभप्रद सिद्ध हुआ है. इससे कुछ कम गूलर के पत्ते और उससे कुछ कम गूलर की पतली डाल के गुण है. जिसके दांत हिलते है और दातों से खून आता हो वे खड़िया मिट्टी 16 भाग, खैर 2 भाग लेकर गूलर के पत्तों के रस में भिगोकर सुखा लें और उसमें एक भाग कपूर मिला दें. इससे दांत व मुंह साफ करें. इससे मसूढ़ा मजबूत हो जाता है और रक्त आना बंद हो जाता है. बरगद, आम, अनार और अमरूद के दातून में इसका दशमांश गुण भी नहीं है परन्तु जहां गूलर न मिले वहां इनका उपयोग किया जा सकता है. दंत रोग के बारे में लिखा है -

दांतों के जो रोग है, पीड़ाप्रद संयोग।
बीच मसूडे दांत के, पीव, पायरिया रोग॥
दांत साफ करके धरे, बत्ती ठीक प्रकार।
बीच मसूढ़े ओठ के, पत्र पीस रस गार।
मध्य मसूढ़े जीभ के, पट्टी धरे विचार।
सब दांतों के रोग में, यही उचित उपचार॥

मलबद्धता में उपयोग : मलबद्धता (कब्ज) में गूलर के पत्तों का एक गिलास शर्बत काफी हितकर होता है और यदि इसके साथ रेड़ी के जड़ की छाल 10 ग्राम पीस कर मिला दें तो इसका गुण और बढ़ जाता है. गूलर के शर्बत में 5 ग्राम हरें का चूर्ण मिलाकर पीने से पाचन संस्थान मजबूत होता है. बहुमूत्र रोगी को मट्ठे में गूलर के पत्ते को पीसकर पीना चाहिए. हृदय रोग (धड़कन) चक्कर आना, रक्त-पित्त जैसे रोगों में भी गूलर का शर्बत उपयोगी है. इसके साथ दूध, चावल का धोवन और मुनक्का के प्रयोग से गुर्दे की क्रिया में विशेष लाभ पहुंचता है और मूत्र-त्याग भी खुलकर और साफ होता है.

अतिसार में उपयोग : अतिसार (अधिक दस्त) में भी गूलर के पत्तों का शर्बत काफी उपयोगी है. इसके लिए मट्ठे के साथ गूलर के तीन चार बड़े पत्तों को पीसकर उसमें काली मिर्च के दो दाने और चावल के धोवन में चटनी के समान पीसकर उसमें थोड़ा काला नमक मिला लें और छानकर

उसमें इच्छानुसार मठ्ठा मिलावें. इसे तीन चार बार पीने से अतिसार में लाभ होता है. इस बारे में लिखा है -

अग्नि कहीं जो मन्द हो, तब भी इसका चूर्ण।
पत्र सहित जो खाइये, समझ अवस्था पूर्ण॥
नमक, मिरिच, मिश्री कहीं, है इसका अनुपान।
समझ-समझ सेवन करें, सब आरोग्य विधान॥
मिरिच, नमक, काला तथा देवें चित्रक चूर्ण।
तक्र सहित तो लाभ भी, इससे होगा पूर्ण॥
अग्निमंद ग्रहणी विकृति, अतीसार का रोग।
इनके लिए विचित्र ही, है यह चित्रक योग॥
थोड़ा सोड़ा खाइए, सौंफ मिरिच के साथ।
कर देंगे उपकार इन, रोगों में श्रीनाथ॥

हैजा में उपयोग : गूलर पत्र का रस हैजा में भी उपयोगी बताया गया है. इसके लिए लिखा है -

हैजा के आरंभ में, पानक (शर्बत) का उपयोग।
बटी, पत्र का योग भी, है अतीव सुखयोग॥
ताजे गूलर पत्र भी, ले ले दो या तीन।
चावल धोवन में इसे, पीसे भले महीन॥
चीनी देवे ग्राम दस, पी जाये प्रतिवार।
दस्त वमन मिट जायेंगे, पायेंगे उपकार॥
जब-जब होवे दस्त, तब-तब मात्रा एक।
पानक देवे चूर्ण ही, देखे लाभ अनेक॥

इसके साथ ही हींग, अफीम व गूलर पत्र की 10 मिग्रा. की गोली बनाकर उपयोग करने से लाभ होता हैं. लिखा है-

हींग, अफीम कपूर की, बटी बना ले आप।
वही करेगा शांत कुछ, हैजे का उपताप।

उदरशूल और जलोदर में उपयोग : पेट के दर्द एवं जलोदर में भी गूलर उपयोगी पाया गया है. इसके संदर्भ में लिखा है-

उदरशूल बहुभांति के, हो परिणामज शूल।
इसी चिकित्सा से सभी होते हैं निर्मूल॥
मात्रा ग्राम तीन से, ग्राम चौबीस पर्यंत।
दे दें जल में पीसकर पीड़ा हरे अनंत॥
दस्त नहीं जो साफ हो, ले हर्रे का चूर्ण।
ग्राम छह दीजिये देख अवस्था पूर्ण॥
यदि रेड़ी का तेल भी, उचित पिला दे आप।
तुरंत हरेगा शूल का, सब विधि से उपताप॥

खांसी में उपयोग : जेठी मधु या मुलेठी बाजारों में मिलती है. इसे धोकर साफ सुखा कर चूर्ण बना लें और इसमें बराबर मात्रा में गूलर के पत्तों का चूर्ण मिलाकर छोटी गोलियां बनायें. इसे मुख में रखकर चूसने से खांसी में काफी आराम मिलता है. पहले अनेक रोगी ऐसे मिले हैं जिन्हें अस्पतालों की दवा से लाभ नहीं मिला और उन्हें

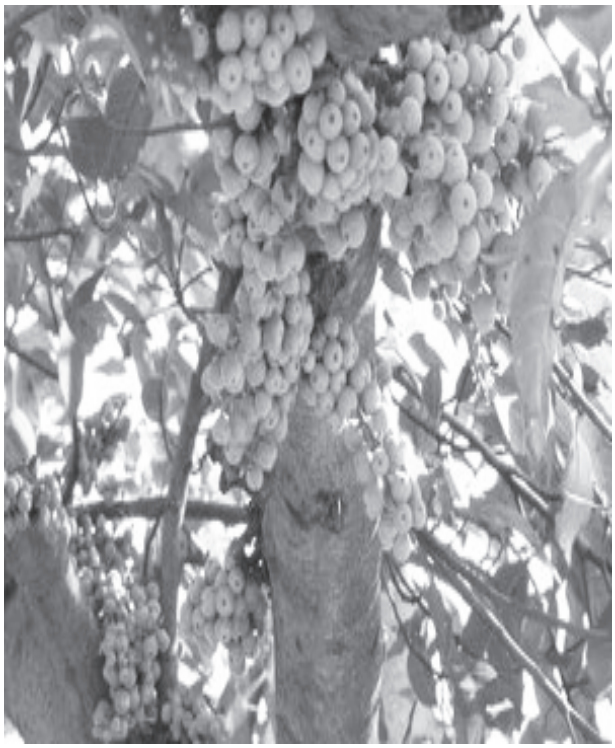

केवल गूलर चिकित्सा से लाभ मिला. इसके लिए गूलर के पत्तों को धोकर साफ सिल पर चावल धोवन से महीन पीसे और पुनः उसमें लगभग 20 ग्राम चावल का धोवन मिलाकर साफ कपड़े से छान लें. इसमें बकरी का दूध मिलाकर खौलाएं और जब गुनगुना हो जाए तो इसे रोगी को दिन में बार बार पीने के लिए देना चाहिए. इसके लिए लिखा है -

जेठी मधु के चूर्ण में, पत्रों के समचूर्ण।
मिला द्योंटिए मधु सहित, लाभ देखिए पूर्ण॥
जेठी मधु के साथ में, यदि होवे गुण पूर्ण ।
चूर्ण बहेड़े का हरे कास-कष्ट को तूर्ण॥
यदि हर्रे का दीजिये. इसमें चूरण आप ।
कास तुरंत मिट जायेगा, सब पूरन परिताप॥
अलग-अलग ये हैं यदपि, औषधि तीन प्रकार।
सभी मिले यदि एक में, करे अधिक उपकार।।
इनकी गोली यदि बना, मुख में रखकर आप।
रस चूस, इसका तुरंत, छूटेगा उपताप॥

उपरोक्त के अतिरिक्त गूलर के अनेक अन्य उपयोग भी हैं. उन सभी का यहां पर वर्णन संभव नहीं है अतः अंत में इन पक्तियों के साथ कि -

यूं ही गूलर पत्र सभी से करे निवेदन।
रख कर अपने शरण छुड़ा ले अपने बेदन॥

सम्पर्क : **डी 63 बी2 सी के-1, भदैनी, वाराणसी**

भारत में बौद्धिक संपदा अधिकार और प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम

-अनिल कुमार

इस लेख में बौद्धिक संपदा अधिकार (Intellectual Property Right), प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम (Copyright act), साहित्यिक-चोरी (plagiarism) और स्व-साहित्यिक चोरी (self-plagiarism) के बारे में नियमावली, विनियम, बौद्धिक संपदा कानूनी साहित्य, संधि सदस्यता से संबंधित ग्रंथों का उपयोग करके संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत की गई हैं. एक या एक से ज़्यादा किसी कृति की प्रतिलिपि भी अपराध की श्रेणी में आती है. इसके अतरिक्त शैक्षणिक, अनुसन्धान और जनकल्याण के क्षेत्र में कुछ नियमों मे लचीलेपन के साथ विशेष शिथिलता भी दी गयी है. भारत का प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम और विश्व के प्रमुख संगठनों में योगदान पर भी इसमें प्रकाश डाला गया है.

मानव एक बौद्धिक और सामाजिक प्राणी है, जो अपने जीवन में दो तरह की सम्पदा अर्जित करता है. पहली भौतिक और दूसरी बौद्धिक सम्पदा. भौतिक सम्पदा की रक्षा के लिए पर्याप्त वैधानिक जानकारी को सामान्य नागरिक भलीभांति समझता है. जबकि बौद्धिक सम्पदा अमूर्त सृजनात्मक होती है, जिसका सृजन बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा किया जाता है. कुछ वर्ष पहले तक बौद्धिक संपदा के लिए वैधानिक नियमों का अभाव था. किन्तु अब इस विषय पर पर्याप्त वैधानिक प्रावधान उपलब्ध है. बौद्धिक कार्य के हितों की रक्षा को 'बौद्धिक संपदा अधिकार' के तहत परिभाषित किया गया है. जैसे कि प्रतिलिप्याधिकार (कॉपीराइट), ट्रेडमार्क, एकस्व (पेटेंट), औद्योगिक डिजाइन, भौगोलिक नक्शे, चित्र, तकनीकी जानकारी, कलात्मक कार्य आदि.. बुद्धिजीवी व्यक्ति की बौद्धिक संपदा भी अन्य सम्पदाओं के समान ही एक सम्पत्ति होती है और 'कॉपीराइट अधिनियम' निर्माता की सृजनात्मकता को संरक्षण प्रदान करता है.

चित्र 1 देखें अंतर्राष्ट्रीय मानक सीरियल नंबर (आई.एस.एस.इन.) जो सीरियल प्रकाशनों के लिए अंतर्राष्ट्रीय पहचानकर्ता है. अंतर्राष्ट्रीय रजिस्टर के अनुसार गत 9 वर्षों में भारत में कुल पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन 21471 था जिसमें हिन्दी में पंजीकृत पत्र-पत्रिकायें 927 थीं (http://www.issn.org/wp-content/uploads/2017/02/Records-per-Languages-most-represented.pdf).

प्रिंटिंग प्रेस के आविष्कार और डिजिटल सूचना की आसानी से उपलब्धता को साहित्यिक चोरी में वृद्धि का मुख्य कारण माना जा सकता है. साहित्यिक चोरी शैक्षणिक ईमानदारी, अनुसंधान और पत्रकारिता में नैतिकता का गंभीर उल्लंघन माना जाता है. जब कोई व्यक्ति दूसरे निर्माता या लेखक के अधिकारों का उल्लंघन जानबूझकर या अनजाने में करता है और अपने लेखन में संदर्भ उल्लेखित नहीं करता हैं. एक आदर्श लेखक अपने लेख में संदर्भ सूची का विवरण अवश्य सम्मिलित करता है. यदि किसी लेखक के कार्य से कोई उद्धरण संपूर्ण या आंशिक लेते हैं, तब संदर्भ अवश्य देना चाहिए. जिससे लेखक अनजाने में साहित्यिक चोरी से बच सकते हैं. अन्यथा नहीं बताए जाने की स्थिति में यह कार्य साहित्यिक चोरी की समस्या में डाल सकता है. साहित्यिक चोरी (हुबहू नकल) न केवल शैक्षणिक दृष्टि से बुरी है, साथ ही साथ कॉपीराइट भी भंग होता है जो कानूनन अपराध है.

एक या एक जैसे लेख को दो या दो से अधिक प्लेटफार्म पर प्रस्तुत करना आत्म साहित्यिक चोरी कहलाती है. पहले

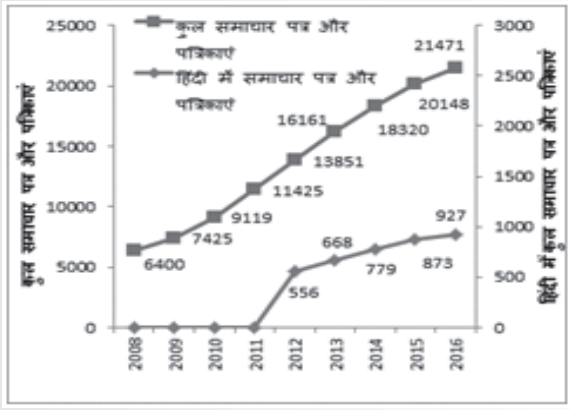

चित्र 1 : आई.एस.एस.इन. निर्देशिका में भारतीय पत्र-पत्रिकायें

प्रस्तुत किए गए लेख के कुछ अंश या विचार फिर से इस्तेमाल कर उसमें आत्म संदर्भ का उल्लेख अवश्य करना चाहिए, जो आत्म-साहित्यिक चोरी के दोष से बचाता है.साहित्यिक चोरी के प्रयास का जोखिम मत उठाइये. यह न केवल असंवैधानिक है बल्कि सामाजिक दृष्टि से भी अपराध है, जिसका सम्मान एवं ख्याति पर भी बुरा असर पड़ता है.

कॉपीराइट की श्रेणियां: कॉपीराइट (लेखक व रचनाकार का अधिकार) एक कानूनी शब्द है जो अधिकारों का वर्णन है. यह रचनाकारों को उनके साहित्यिक और कलात्मक कार्यों पर जोर देता है. पुस्तकों, संगीत, पेंटिंग, मूर्तिकला और फिल्मों से लेकर कंप्यूटर प्रोग्रामिंग, डेटाबेस, विज्ञापन, नक्शे और तकनीकी चित्रों तक कॉपीराइट का दायरा आता है. बौद्धिक संपदा को दो श्रेणियों में विभक्त करके आसानी से समझ सकते हैं :-1- **कॉपीराइट का अधिकार**- साहित्यिक और कलात्मक कार्य के रचनाकार को दिया गया अधिकार और टी.वी./रेडियों प्रसारण के निष्पादक (performer) का अधिकार. 2 औद्योगिक संपदा अधिकार (जैसे ट्रेडमार्क), डिजाइन तथा प्रौद्योगिकी उत्प्रेरित करने के लिए संरक्षित औद्योगिक संपदा. भारत ने विभिन्न अंतराष्ट्रीय समझौतों पर सहमति दी है तथा विश्व के प्रमुख संगठनों को अपना सक्रिय रूप से योगदान दे रहा है. जैसे विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (The World Intellectual Property Organization), इत्यादि को बर्न कन्वेंशन (Berne Convention1886)

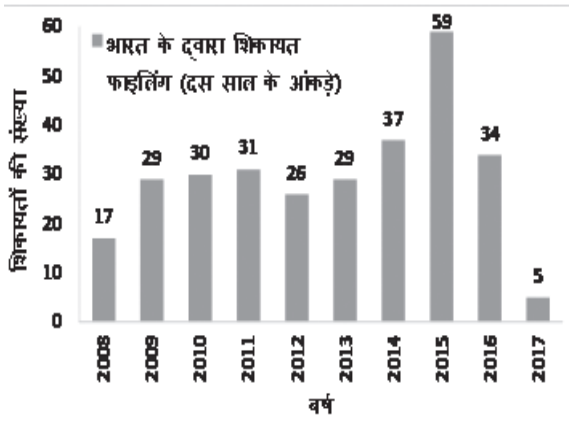

चित्र 2: भारत के द्वारा दर्ज की गयी बौद्धिक संपदा से संबन्धित शिकायतों के आंकड़ें

विश्व बौद्धिक संपदा संगठन 189 सदस्य देशों की राष्ट्रीय/क्षेत्रीय स्तरों पर पेटेंट संस्थाओं के साथ विशेषज्ञता, दक्षता व अनुभव के साथ संगठन की दिशा, बजट और गतिविधियों का निर्धारण भी करती है. यह बौद्धिक संपदा नीति, बौद्धिक सेवायें, विश्वस्तरीय सूचना और सहयोग के साथ साथ विवादों से निपटने में अंतराष्ट्रीय स्तर पर प्रदान करता है. विश्व बौद्धिक संपदा संगठन सभी सदस्य देश के बौद्धिक संपदा नियमों और विनियमन जानकारी को संग्रहित एवं संरक्षित करता है. चित्र 2 दस सालो में भारत के द्वारा दर्ज की गयी बौद्धिक संपदा से संबन्धित शिकायतों के आंकड़े दर्शाता है.

बर्न कन्वेंशन फॉर द प्रोटेक्शन ऑफ़ लिटरेरी एंड आर्टिस्टिक वर्क्स: प्रत्येक रचनात्मक कार्य जिस क्षण अस्तित्व में आता है. जैसे यदि आपने एक किताब/ई-पुस्तक, एक सीडी/डीवीडी या गीत, कहानी, नाटक, या मूर्तिकला या पेंटिंग बनाई है, तो आप स्वचालित रूप से कॉपीराइट के स्वामी हैं, और अपने आप ही कॉपीराइट एक्ट से बंध जाते हैं. (Berne Convention was held in 1886 in Berne, Switzerland). भारत सहित दुनिया के 171 देशों ने कॉपीराइट संधि पर हस्ताक्षर किये हैं, जिसे 'Berne Convention for the Protection of Literary and Artistic Works' नाम से जाना जाता है, यह संधि सभी सदस्य देशों को आज भी मान्य है जो बर्न कन्वेंशन के हस्ताक्षरकर्ता हैं.

भारत प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम : कॉपीराइट एक्ट (प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम), 1847 भारत का कॉपीराइट एक्ट पर पहला कानून था. इसके बाद इंगलिश कॉपीराइट एक्ट-1911, 31 अक्तूबर, 1912 से लागू हुआ. 1914 में भारतीय विधानमंडल ने इंग्लिश कॉपीराइट एक्ट, 1911 के प्रावधानों को सम्मिलित करके भारतीय कॉपीराइट अधिनियम, 1914 लागू हुआ. इंग्लिश एक्ट, 1911 को इंग्लिश कॉपीराइट एक्ट, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया तो भारतीय अधिनियम में बदलाव कर कॉपीराइट एक्ट 1957 बना जो भारतीय है. कॉपीराइट एक्ट, 1957 में अब तक 1983,1984,1992,1994 और 1999, 2012 में संशोधन किया गया है. प्रतिलिप्याधिकार बोर्ड, न्यायिक निकाय का गठन सितम्बर 1958 में हुआ था. इस बोर्ड का मुख्य कार्य है- कॉपीराइट पंजीकरण, अप्रकाशित भारतीय बौद्धिक कार्यों, उत्पादन और प्रकाशन के अनुवादों से संबंधित लाइसेंस एवं कॉपीराइट पंजीकरण के विवादों के निर्णयों का उत्तरदायित्व निभाता है. यह कॉपीराइट अधिनियम के तहत कार्य के साथ साथ अन्य विविध मामले भी सुनता है. वर्तमान प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम (संशोधन), 2012 जो प्रभावी रूप से लागू हुआ. जून 21, 2015 को पूर्ण कालिक कॉपीराइट बोर्ड के तहत धारा 11 के अनुसार अध्यक्ष और दो अन्य सदस्यों से साथ कार्य करेगा जिसका मुख्यालय दिल्ली में है. प्रतिलिप्याधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2012 के अंतर्गत प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम, 1957 में किये गये संशोधन व जानकारी उपलब्ध कराई गई

है. इन नियमो का संक्षिप्त नाम प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम (संशोधन) नियम, 2016 है (भारत का राजपात्र, भाग II-खंड 3 - उपखण्ड (I), 12 अगस्त 2016; भाग 2-खंड 1, 8 जून 2012).उपयोगकर्ता अधिनियम से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं. (http://copyright.gov.in; https://india.gov.in).

कॉपीराइट अधिनियम, 1957 के मुताबिक कॉपीराइट

- मौलिक साहित्यिक रचना- उपन्यास, कविता, नाटक,पत्र-पत्रिका और विज्ञापन आदि
- नाट्य रचना, रंगमंचीय अथवा कलात्मक कृति
- गीत-संगीत तथा अन्य रिकार्ड पर रचना
- कलात्मक रचना
- चलचित्र रचना पर कॉपीराइट
- ध्वनि रिकार्डिंग पर कॉपीराइट
- कम्प्युटर से जुड़ी रचनाएँ जैसे सारणी, डाटाबेस आदि पर कॉपीराइट

कृति के रचनाकार की कविता, फोटोग्राफ, पेंटिंग आदि पर कॉपीराइट होगा.यदि कोई पत्र-पत्रिका रोजगार के दौरान बनाई गई है तो पत्र-पत्रिका के प्रकाशक को अपनी किसी पत्र-पत्रिका में रचना प्रकाशित करवाने का अधिकार है. शेष सभी अधिकार लेखक के होंगे. अगर कोई फोटोग्राफ / पेंटिंग/नक्काशी/ किसी व्यक्ति के भुगतान पर बनाई गयी हो तो भुगतान करने वाले को कॉपीराइट प्राप्त होगा. सरकार के अंतर्गत किए गये किसी रचनात्मक कार्य का कॉपीराइट सरकार का होगा. अगर कृति किसी सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थान ने बनाई या प्रकाशित की हो या किसी सरकारी प्रतिष्ठान के निर्देश पर तैयार की गयी है, तो कॉपीराइट उस संस्थान का माना जायेगा.

इन कार्यों में कॉपीराइट की अवहेलना नहीं : **1).** किसी पत्र-पत्रिका / फिल्म / फोटो / प्रसारण के जरिए ताजा घटनाक्रम की खबर देने के लिए किसी रचनात्मक कृति की आलोचना अथवा समीक्षा करना कॉपीराइट का उल्लंघन नहीं है; **2).** निजी इस्तेमाल के लिए प्रतियां बनाना/ इसमें किसी कंप्यूटर प्रोग्राम की बैक अप कॉपी बनाना भी शामिल है; **3).** न्यायिक अथवा संसदीय कार्यवाही की रिपोर्टिंग करना. मौलिक साहित्य / फिल्म / प्रसारण / फोटोग्राफ / के छोटे अंश का विज्ञापन के रुप में प्रकाशन करना; **4).** कृति के छोटे-छोटे उदाहरणों का सार्वजनिक पाठ करना; **5).** कानूनी कृति की प्रमाणित प्रतियां; **6).** पढ़ाने, समझाने या परीक्षा के दौरान कृति के अंश का इस्तेमाल; **7).** शैक्षणिक संस्था की गतिविधियों के अंतर्गत साहित्यिक, रंगमंचीय अथवा संगीतिक कार्यक्रम में कृति अथवा उसके अंशों की प्रस्तुति; **8).** किसी क्लब अथवा धार्मिक संस्था में कृति अथवा उसके अंशों की प्रस्तुति; **9).** स्थापत्य या भवन निर्माण से जुड़ी कलात्मक कृति की पेंटिंग, ड्राइंग या फोटोग्राफ बनाना/प्रकाशित करना. **कॉपीराइट का पंजीकरणः** वैसे तो स्वतः ही आपकी कृति अपने आप आपकी हो जाती हैं. इसके लिए किसी पंजीकरण की जरुरत नहीं होती है. लेकिन पंजीकरण से रचनात्मक कृति की प्राथमिकता निर्धारण कराने में मदद मिलती है. निर्धारित फॉर्म में निर्धारित शुल्क के साथ कॉपीराइट पंजीकरण कर सकते हैं.(http://copyright.gov.in). कॉपीराइट का मालिक कॉपीराइट के अधिकार को पूरी तरह या आंशिक रुप से किसी अन्य व्यक्ति को सौंप सकता है. *क्रिएटिव कॉमन्स (CC)*- एक सार्वजनिक कॉपीराइट लाइसेंसों में से एक है, जो कॉपीराइट कार्य लाइसेंसों को निः शुल्क प्रदान करता है. क्रिएटिव कॉमन्स के द्वारा लेखक अपने रचनात्मक कार्यों को अपनी शर्तों पर साझा, उपयोग और उनका निर्माण करने का अधिकार देता है जो उन्होंने बनाए हैं.

निष्कर्ष : बौद्धिक संपदा का जनकल्याण के लिए उचित उपयोग किया जाना, वाक्यांश के सही सन्दर्भ देना, दोषपूर्ण सामग्री का प्रकाशन न करना और किशोरों को हानिकारक प्रकाशनों से होनेवाले दुष्परिणामों से बचाया जाना चाहिये, इसके अंतर्गत पत्र-पत्रिका, पैम्फलेट, समाचार पत्र आदि में अपराधों, हिंसा, क्रूरता, सामाजिक घृणा एवं भयाभय/ भयभीत प्रवृति की घटनाओं के लेख, चित्र या अन्य माध्यम से यदि कोई इस प्रकार के हानिकारक प्रकाशन का वितरण या बिक्री या किराये पर देता है तो एक अपराध का दोषी होगा (प्रकाशन कानून1956). प्रतिलिप्याधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2012 शोध कार्य हेतु किसी रचना के प्रयोग की अनुमति देता है और कॉपीराइट से छूट प्रदान करता हैं. पायरेसी करने वालों के लिए आर्थिक जुर्माने के साथ साथ दो वर्ष की जेल का प्रावधान है. यह लेख पुस्तकालय और सूचना प्रबंधन, संपादकीय बोर्ड, लेखकों, विद्यार्थियों, शिक्षकों, व्यवसायी आदि के लिए उपयोगी हो सकता है.

(विशेष आभार- श्रीमती तनुश्री पाल,वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक, बी.ए.आर.सी., मुम्बई)

सम्पर्क : **(पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान)**
वैज्ञानिकसूचनाएवंसंसाधनप्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

विज्ञान समाचार

ब्लैक होल का रहस्य

खगोलविदों के लिए ब्लैक होल और इससे जुड़ी घटनाएं हमेा से ही गहन जिज्ञासा का विषय रहीं हैं. इस बार वैज्ञानिकों ने ब्लैक होल से जुड़ी एक ऐसी घटना को देखा है जिसे लेकर अब तक काफी भ्रांतियां रहीं हैं. वैज्ञानिकों ने अंतरित्र में ब्लैक होल को एक तारे का अस्तित्व समाप्त करते और उसका मलबा अंतरिक्ष में धकेले जाने की एक अद्वितीय

घटना को देखा है. यूं तो खगोलविद पहले भी कई बार तारों का अस्तित्व समाप्त होने की घटनाओं को गवाह बने हैं लेकिन यह पहला मौका है जब वैज्ञानिकों ने इस पूरी प्रक्रिया के दौरान कुछ ऐसी चीजों को देखने का दावा किया जिसको लेकर अभी तक काफी भ्रांतियां बनी हुई थीं. वाशिंगटन पोस्ट की एक रिपोर्ट के अनुसार ब्लैक होल को एक तारे का अस्तित्व समाप्त करने की इस प्रक्रिया में पहली बार तारे के बचे मलबे को ब्लैक होल द्वारा अंतरिक्ष में फेंके जाने की प्रक्रिया को भी पकड़ा गया है. खगोलविदों का कहना है कि यह पहला मौका है ब्लैक होल के तारे का अस्तित्व खत्म करते देखे जाने के साथ उसका मलबा अंतरिक्ष में उछाले जाने की घटना को भी देखा गया है. पहली बार बाहर फेंके गये मलबे से निकले रेडियो संकेतों को पकड़ा गया है. वैज्ञानिकों के अनुसार किसी तारे को इस तरह फाड कर अंतरिक्ष में उढ़ाले जाने की यह घटना अभी तक रहस्यमय बनी हुई थी. अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के अनुसार जब कोई तारा किसी ब्लैक होल के नजदीक आ जाता है तो ब्लैक होल से निकलनेवाला जबरदस्त चक्रवाती बल तारे को फाड़ कर रख देता है और तारे का मलबा बाहर की ओर उछाल दिया जाता है, बाकी बचा भाग ब्लैक होल निगल जाता है. जान हा प्कस विश्वविद्यालय के जोएर्ट वाल वेलजन ने बताया 'अंतरिक्ष में होने वाली जिस घटना को देखा गया है वह दुर्लभ है. वह पहला मौका है जब किसी ब्लैक होल को तारे को निगलते देखते हुए तारे के बचे हुए मलबे को ओक फनल के आकारा में बाहर फेंकते हुए भी देखा गया है. नासा के अनुसार ब्लैक होल से जुड़ी इस घटना को देखा जाना यूं तो काफी दुर्लभ है ही लेकिन ब्लैक होल के बारे में अब भी काफी कुछ पता लगाना बाकी है.

जेम्स वेब अंतरिक्ष दूरबीन

नासा ने जेम्ह वेब अंतरिक्ष दूरबीन पर पहली बार 18 फ्लाइट मिरर लगाया है. वर्ष 2018 में हबल अंतरिक्ष दूरबीन के स्थान पर इसे कार्य में लाने के लिए इसकी संरचना में किया गया यह पहला महत्वपूर्ण बदलाव है. नासा के गोडार्ड स्पेस फ्लाइट सेंटर में इस सप्ताह इंजीनियरिंग टीम ने षटकोणीय आकार के एक खंड को उठाने और नीचे लाने के लिए एक रोबोट आर्म का इस्तेमाल किया. एकसाथ जोड़कर लगाये जाने के बाद मिरर की 18 प्राथमिक इकाइयां 6.5 मीटर के बड़े मिरर के रूप में एकसाथ काम करेंगी. अगले साल की शुरुआत में इसे पूरी तरह लगा दिये जाने की संभावना है. अंतरिक्षयात्री और नासा के विज्ञान मिशन निदेशालय के सहायक प्रशासक जॉन गर्नसफेल्ड ने कहा 'जेम्स वेब अंतरिक्ष दूरबीन अगले दशक का प्रमुख खगोलीय वेधशाला होगी.'

मंगल का सबसे बड़ा चंद्रमा फोबोस

मंगल का सबसे बड़ा चंद्रमा फोबोस धीरे-धीरे अपने ग्रह पर गिरने की ओर बढ़ रहा है और इसके अलग-अलग टुकडों में विभक्त होकर शनि और बृहस्पति की भांति लाल ग्रह के इर्द-गिर्द वलय बन जाने की संभावना है. कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय वैज्ञानिकों के मुताबिक फोबोस का खत्म होना अपरिहार्य है लेकिन निकट भविष्य में ऐसा नहीं होने वाला है. यह संभवतः दो से चार करोड़ वर्षों के बाद होगा. इससे एक वलय बनेगा जिसका अस्तित्व दस लाख से दस करोड़ वर्ष तक रहेगा.

एलियन की खोज नाकाम

पिछले 58 वर्षों में एलियन की खोज में कोई निर्णायक परिणाम नहीं निकला है जैसा कि मालूम है तक नासा की स्थापना सन 1958 में हुई. तब से अब तक एलियन की खोज जारी है हाल ही के ताजा शोधों में कुछ ग्रहों पर जीवन के संकेत मिले हैं तो उन ग्रहों पर कम अवधि का जीवन हो सकता है इसलिए उन पर विचरण करने वाले प्राणी जल्दी ही विलुप्त हो जाते हैं. वैज्ञानिकों का कहना है कि इन ग्रहों पर जीवन मुश्किल है. इस शोध समूह में शामिल आस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी के भारतीय मूल

के प्रोफेसर डॉ.आदित्य चोपड़ा के अनुसार, 'यह ब्रह्मांड रहने योग्य कई ग्रहों से भरा है, इसलिए वैज्ञानिकों की धारणा है कि इन ग्रहों पर जीवन की अधिक समय तक पनपने ही नहीं दिया. जिसके कारण वहां पर जीवन का विकास नहीं हो पाया.' डॉ. आदित्य चोपड़ा के अनुसार, 'हाल के ग्रहों के पर्यावरण रहने योग्य वातावरण, जीवन निर्मित करने में अस्थिर हैं, क्योंकि जीवन के लिए ग्रीन हाउस गैसों की विनियमित करने की जरूरत है, पानी (H_2o) और कार्बन डाइ ऑक्साइड (co_2) सतह के तापमान में स्थिरता लाने के लिए जरूरी होते हैं एक अन्य ताजा शोध के अनुसार हमारी पृथ्वी के चार करोड़ साल पहले शुक्र और मंगल शायद रहने योग्य थे. लेकिन इसके एक लाख साल बाद शुक्र गर्म और मंगल ठंडे ग्रहों में तब्दील हो गया.' इस अध्ययन के सह-लेखक चार्ली लीनवीवर के अनुसार, शुक्र और मंगल के तेजी से बदलते वातावरण में सूक्ष्म जीवन स्थिर रहने में विफल रहे हैं, वहीं पृथ्वी पर स्थिर तापमान ने जीवन के विकास में अहम भूमिका निभाई है.

अंतरिक्ष में रोबोट

नासा छह फुट लंबा एक मानवरूपी रोबोट विकसित कर रहा है, जो भविष्य में अंतरिक्ष यात्रियों को मंगल और क्षुद्रग्रहों पर जोखिम भरे और खतरनाक अभियानों में मदद पहुंचा सकता है. अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नए मानवरूपी रोबोट को तैयार करने पर विचार कर रही है जो अंतरिक्षयात्रियों को भविष्य के अभियानों में मदद पहुंचा सकता है. नासा के लांगले रिसर्च सेंटर के साशा कोंगीयू एलिस ने एस्ट्रोवाच डॉट नेट को बताया, 'मानव अभियान से पहले रोबोट भी विज्ञान अभियान के लिए शानदार साबित हो सकते हैं. यही कारण है कि एजेंसी छह फुट लंबा मानवरूपी रोबोट बना रही है जिसका नाम आर-5 है. इसे पहले वाकयरी

के नाम से जाना जाता था. मशीन का वजन करीब 131 किलोग्राम है. इसे शुरुआत में आपदा राहत अभियानों के लिए बनाया गया था. अगर नासा यह मिशन सफल हो गया तो अंतरिक्ष यात्रियों को इससे बहुत बड़ी राहत मिलेगी.

10 अरब साल पुरानी सुपरनोवा की तस्वीर

वैज्ञानिकों ने करीब 10 अरब साल पहले अंतरिक्ष में तारे में हुए विस्फोट यानी सुपरनोवा की तस्वीरें खींचने में सफलता हासिल की है. इन तस्वीरों को हब्बल अंतरिक्ष दूरबीन की सहायता से खींचा गया. वैज्ञानिकों ने 10 अरब साल पुरानी इस घटना के दिखाई देने का पूर्वानुमान लगाया था.

आरईएफएसडीएएल नाम के इस सुपरनोवा को गैलेक्सी क्लस्टर एमएसीएस जे1149.5+2223 में देखा गया. इस घटना से वैज्ञानिकों को रहस्यमयी डार्क मैटर को समझने में सहायता मिल सकती है. इस साल 11 दिसंबर को वैज्ञानिकों ने इस सुपरनोवा को ठीक उसी जगह देखा, जहां का पूर्वानुमान था.

वैज्ञानिकों ने बताया कि गैलेक्सी क़्लस्टर से सुपरनोवा के प्रकाश को हम तक पहुंचने में पांच अरब साल का वक्त लगा, जबकि यह घटना करीब 10 अरब साल पहले हुई थी. अंतरिक्ष में बहुत से तारे विस्फोट के साथ नष्ट हो जाते हैं। इसी घटना को सुपरनोवा कहा जाता है. ऐसी घटनाएं आमतौर पर वैज्ञानिकों की पहुंच से दूर रही हैं.

संजय गोस्वामी
एनआरबी, मुंबई

म नो ग त

संयुक्तांक का पृष्ठ ज्यादा होना चाहिए

'वैज्ञानिक' का अंक मिला, साज सज्जा देखकर मन गदगद हुआ. कुछ अच्छे लेख भी पढ़ने को मिले. हालांकि यह संयुक्तांक था, लेकिन पृष्ठों की कमी अखर गई. कम से कम 96 पृष्ठों का अंक तो बनता है संपादकजी. खैर इस अंक में वैश्विक तापमान वृद्धि और प्रदूषण नियंत्रण व *'अवरक्त प्रौद्योगिकी'* से संबंधित आलेख रोचक, ज्ञानवर्द्धक और प्रशंसनीय हैं. *वैश्विक तापमानवाले* आलेख में सुझाव थोड़ा कठिन लगे. इसका पालन कितना संभव हो सकेगा. यह विचारनीय है. एक और आलेख *'मानवता व पर्यावरण' के लिए घातक जैविक हथियार*....एक अच्छा लेख है. पर जानकारी कम मिली. इस अंक के दो आलेखों पर मेरी राय यह है कि लेख - *'पानी भंडारण कुंड'* की प्रस्तुति बेकार और नीरस लगी तथा इबोला जैसे प्रचलित विषय को इतनी जगह देना पेजों की बरबादी लगती है. संपादन मंडल इससे बचे. इस अंक में श्री बालकृष्ण काबरा की टिप्पणियां सर्वोत्तम लगीं. ऐसी पठनीय सामग्री भविष्य में भी दी जानी चाहिए. इस अंक में *'पानी भंडारण कुंड'...और 'इबोला'*... पर छपा आलेख पृष्ठों की बरबादी है. यह भी जाने स्तंभ अच्छा लगा है. ऐसी जानकारियां आगे भी देते रहें.

'इंटरनेट पर प्रसारित जानकारियों के आधार पर रचनाएं न भेजें.' वाला निर्देश समझ में नहीं आया. क्या इंटरनेट का प्रयोग ही न किया जाए. नई जानकारियां प्राप्त करने में ? ऐसा तो नहीं होना चाहिए.

दो अंकों के संयुक्तांक में 40+40=80 पृष्ठ होने चाहिये, पर इसमें केवल 66 पृष्ठ हैं. पृष्ठ बढ़ाना चाहिए था. कंजूसी क्यों की गई? शेष सभी सामग्री अच्छी लगी. नए संपादन मंडल का स्वागत है. **- सलाउद्दीन**

जानकारीपूर्ण पत्रिका

मुझे *'वैज्ञानिक'* जनवरी 2016 का अंक मिला. बहुत बहुत धन्यवाद! *'वैज्ञानिक'* हिन्दी की बहुत जानकारीपूर्ण पत्रिका है. नए लेखक के कुछ लेख बहुत उपयोगी हैं. नए लेखक के लिए हिन्दी में वैज्ञानिक चिंतन उपलब्ध कराने के लिए धन्यवाद! मैं आप सभी को बहुत-बहुत बधाई देता हूँ कि विज्ञान जागरुकता का यह कार्य आप इतने लंबे समय से करते आ रहे हैं. कुछ मुद्रण गलतियां हैं जिन्हें सुधारा जा सकता है. इस आशा के साथ कि 'वैज्ञानिक' नित नई ऊंचाइयों को छूती रहे और विज्ञान लोकप्रीयकरण के क्षेत्र में आप इसी तरह आगे बढ़ते रहें. आपकी टीम इसी तरह पूरे मनोयोग से विज्ञान जागरूकता का कार्य करती रहे. मेरी शुभकामनायें आपके साथ हैं.

-प्रेमचंद्र श्रीवास्तव, अनुकम्पा, वाई 2 सी, 115/6, त्रिवेणीपुरम, झूँसी, इलाहाबाद-19

वैज्ञानिक एक सराहनीय प्रकाशन

भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द की हिंदी इकाई द्वारा प्रकाशित की जा रही पत्रिका *'वैज्ञानिक'* में बहुत गंभीरता के साथ विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न पहलुओं पर उत्कृष्ट रचनाओं का प्रकाशन किया जाता है. इससे देश के विख्यात और अनुभवी विज्ञान लेखक जुड़े हुए हैं. हिन्दी में विज्ञान लेख प्रतियोगिता का आयोजन और पुरस्कृत लेखों का प्रकाशन दोनों ही सराहनीय पहल है. इस पत्रिका के अनवरत प्रकाशन के लिए मै बधाई और शुभकामनायें देता हूँ.

डॉ. मनीष मोहन गोरे, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)

अच्छा लगा 'वैज्ञानिक'

आपके केंद्र द्वारा प्रकाशित हिंदी गृह पत्रिका 'वैज्ञानिक' की प्रति प्राप्त हुई. पत्रिका भेजने के लिए धन्यवाद.

वैज्ञानिक विषयों को राजभाषा हिंदी में प्रस्तुत करना सराहनीय है. इसके लिए संस्थान की ओर से आपको व आपकी पूरी टीम को बधाई. आशा करते हैं कि आप भविष्य में भी इसी प्रकार सम्पर्क बनाए रखेंगे तथा केन्द्र की राजभाषा संबंधी गतिविधियों से अवगत कराते रहेंगे. शुभकानाओं सहित

-चि.वें.सुब्बाराव, हिंदी अधिकारी,पो.व.स.724 उप्पल रोड, हैदराबाद-500 007 (आं.प्र.)

डॉ कलाम विशेषांक के लिए साधुवाद!

मुझे *'वैज्ञानिक'* जनवरी-दिसंबर 2015 का डॉ कलाम विशेषांक अंक प्राप्त हुआ. इस अंक भारत रत्न स्व. डॉक्टर ए.पी. जे अब्दुल कलाम के निधन पर उनके जीवन पर एक आदर्श लेख पढ़ने को मिला, धन्यवाद ! एक बेहद गरीब परिवार से होने के बावजूद अपनी मेहनत और समर्पण के बल पर दया और करुणा की भावना से ओत-प्रोत, मानवता की मशाल को सदैव प्रज्वलित कर बड़े से बड़े सपनों को साकार करने का एक जीता-जागता प्रमाण हैं डॉक्टर अब्दुल कलाम. स्व. डॉक्टर अब्दुल कलाम को शत् -शत् नमन! इसके अलावा अन्य प्रकाशित विज्ञान से संबंधित लेख भी समसामायिक और वैज्ञानिक ज्ञान से परिपूर्ण है. मेरे आलेख *'मूत्र संक्रमण'* को पत्रिका में स्थान देने के लिए धन्यवाद ! शुभकामनाओं सहित!

डॉ. दया शंकर त्रिपाठी, डी बी 2/63 सी-1के, भदैनी, वाराणसी - 221 001

वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली -5

1	2	3		4		5
6		7			8	9
10					11	
12	13	14	15			
	16	17	18	19	20	21
22	23	24				
25		26	27		28	

बाँए से दाँए

4.कोशिकाओं का समूह (3)
6.प्रसिद्ध पूर्व क्रिकेट खिलाड़ी, भारतीय पारी की दीवार (3)
7.भय (2)
8.चमड़ी (2)
10.भारत रत्न (वर्ष 2013) वैज्ञानिक (1,2,2,2)
13.परमाणु ऊर्जा को रिएक्टरों में जो ग्रहण करता है (4)
14.सतह (2)
15.भाग्य (अंग्रेजी का शब्द) (2)
16.वनस्पति विज्ञान में कई महत्त्वपूर्ण खोजों के लिये प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक (4,2) ---------बसु
23.हानि (2)
25.अनुकरण, अनुकृति (3)
26.बुरी आदत, व्यसन (2)
27.नमी, गीला (2)
28.पल, क्षण (2)

ऊपर से नीचे

1.दक्षिण भारतीय (पुराना संबोधन) (3)
2.'वैज्ञानिक' के संपादक की एक अन्य पहचान (2)
3.इनकार, नकार (3)
4.रासायनिक क्रिया को तेज कर देता है (4)
5.बीता या आने वाला दिन (2)
9.अम्ल, क्षार, नमक इत्यादि (3)
10.वैज्ञानिक जिनके जन्म दिन को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रूप में मनाया जाता है. (1,1,3)
11.देश (2)
12.बहादुर (2)
17.वेग (2)
18.--------समारोह (विश्वविद्यालय की एक वार्षिक सभा) (3)
19. चीनी (3)
20.अस्थिर (3)
21. पदार्थ (2)
22.जेहन, चित्त (2)

पहेली निर्माताः सत्यवान बंसल

वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली -4 का सही हल

1 अ	2 मी	बा	प्रो	3 टि	4 य	स
5 प	ल	ट	ना	का	कृ	6 प्रे
र	का	7 ग	8 ग	न	त	श
द	प	9 ठि	ग	10 ना	जी	र
11 न	त्थ	12 या	री	श	13 के	कू
गी	र	त्रा	14 व	15 पा	व	क
16 ना	ग	17 थ	र्मा	मी	ट	र

'वैज्ञानिक' पत्रिका में प्रकाशन हेतु लेखकों के लिए मानक दिशा-निर्देश (Standard Guidelines)

वस्तुपरकः 'वैज्ञानिक ' राजभाषा हिंदी में विज्ञान विषय पर प्रकाशित लेखों की त्रैमासिक पत्रिका है जिसका प्रकाशन 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद', मुंबई द्वारा भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से किया जाता है. इसमें पर्यावरण, प्राकृतिक विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग, और परमाणु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के शांतिपूर्ण उपयोग एवं विज्ञान के अन्य सभी विषयों पर आधारित लेख शामिल किये जाते है. इस पत्रिका के विभिन्न अनुभागों में संपादकीय, शोध पत्र, समीक्षा लेख, लघु लेख, विज्ञान समाचार, अन्वेषण नोट, विज्ञान प्रश्नोत्तरी, भेंटवार्ता इत्यादि पर वैज्ञानिकों, इंजीनियरों, शिक्षाविदों, छात्रों एवं जनसाधारण के लाभार्थ हेतु लेख प्रकाशित होते है.

टंकित प्रति (टाइपस्क्रिप्ट) :

शोधपत्र (अधिकतमः 3000 शब्द) के मूल शोध निष्कर्षो को स्पष्ट और संक्षिप्त रूप में अभिव्यक्त किया जाए. सैद्धांतिक, तथ्य, प्रयोगात्मक विधियों, परिकल्पना, अवलोकन, गणना और क्षेत्रीय सर्वेक्षण के परिणामों की रिपोर्टों पर आधारित लेखों को भी शामिल किया जाता हैं.

समीक्षा लेख (अधिकतमः 5000 शब्द) विशिष्ट विषय क्षेत्र में अद्यतन जानकारी के सर्वेक्षण संग्रह एवं पूरी समझ के बाद ही भेजे जाने की उम्मीद की जाती है. विषय विशेषज्ञों के लेखों की समीक्षा संपादन मंडल द्वारा भी की जाती है.

शोध पर आधारित लघु लेख / विज्ञान समाचार (अधिकतमः 2000 शब्द): क्रियान्वित अनुसंधान की प्रगति पर सामान्य रूप से संक्षिप्त रिपोर्ट या छोटा तकनीकी लेख या कोई अनुप्रयोग से संबंधित लेख हो सकते हैं.

हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता : हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता की कृतियों हेतु अलग से लेखकों के लिए मानक दिशा-निर्देशों का उल्लेख समय समय पर 'वैज्ञानिक' में किया जयेगा.

लेख प्रक्रिया शुल्क : 'वैज्ञानिक' हिंदी पत्रिका में प्रकाशन के लिए कोई शुल्क नहीं लिया जाता है बल्कि परिषद द्वारा प्रकाशित लेखों के लिये 300 रुपये का मानदेय प्रति पृष्ठ दिया जाता है.

साहित्यिक-चोरी (Plagiarism) चेक / प्राथमिक जांच : भेजे गये लेख या पांडुलिपि को मूल (original) एवं अप्रकाशित होना चाहिए. अगर लेख में साहित्यिक चोरी एक स्वीकार्य सीमा से अधिक पाई जाती है तो कृति को संपादकीय बोर्ड द्वारा अस्वीकार कर दिया जाएगा. लेखक साहित्यिक चोरी / साहित्यिक संबंधित क़ानूनी एवं कॉपीराइट मुद्दों के लिए पूरी तरह से स्वयं जिम्मेदार होगा. हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं वैज्ञानिक संपादन मंडल किसी भी प्रकार से इनके उल्लंघन के लिये जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है.

लेख / पांडुलिपि भेजनाः

- लेख / पांडुलिपि को एम.एस. वर्ड (MS Word) यूनिकोड या पीडीएफ प्रारूप में भेजना चाहिए। यूनिकोड लेख / पांडुलिपि को ई-मेलः hvsp@barc.gov.in / vsen@barc.gov.in पर या डाक द्वारा मुख्य संपादक के पते पर भेजा जा सकता है.
- पांडुलिपि / लेख को मंगल या गूगल के 12 साइज फोंट, A 4 प्रारूप (210 मिमी x 297 मिमी) तथा प्रत्येक किनारे पर 25 मिमी रिक्त स्थान छोड़कर प्रिंट लेकर या ई-मेल से भेजना चाहिए. कृति के लेखन की रिपोर्टिंग आमतौर पर अन्य पुरूष (सर्वनाम) में होनी चाहिए.

लेखक द्वारा प्रावरण पत्र / घोषणा-पत्र की अनिवार्य प्रस्तुतिः

पांडुलिपि को प्रकाशित करने के समय लेखक को एक प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना अनिवार्य है. प्रमाण-पत्र का प्रारूप है -

यह प्रमाणित किया जाता है कि 'वैज्ञानिक' पत्रिका में प्रकाशन के लिए प्रस्तुत ".....\" नामक शीर्षक के तहत दी गई समस्त जानकारी एक मौलिक रचना है और कहीं और प्रकाशन के लिए विचाराधीन / प्रस्तुत नहीं की गयी है.

मैं / हम आगे यह भी प्रमाणित करते हैं कि उचित उद्धरण के लिए उपयुक्त संदर्भ दिये गये हैं और अन्य प्रकाशनों से कोई भी डेटा / तालिकाओं/ आंकड़े / चित्र बिना आभार या लेखक की बिना अनुमति के उद्धृत नहीं किए गए है. इस लेख के सभी लेखकों की सहमति लेकर इसे 'वैज्ञानिक' पत्रिका में प्रकाशन के लिए भेजा गया है. शोध-पत्र के लिये जहां कार्य किया गया था वहाँ के जिम्मेदार प्राधिकारियों द्वारा स्पष्ट रूप से मंजूरी दी गई है.

सभी लेखकों के हस्ताक्षर और नाम

लेख संरचना :

शीर्षक : शीर्षक का उपयोग सूचना-पुर्नप्राप्ति के लिये किया जाता है. शीर्षक संक्षिप्त और सूचनात्मक होने चाहिएं. जहां तक संभव हो, शीर्षक में शब्द-संक्षेप (abbreviations) और सूत्रों से बचें.

लेखकों के नाम और संबद्धता (कार्यालय का पता): सब लेखकों के पूर्ण नामों को स्पष्ट रूप से बताएं और निश्चित कर लें कि सभी नामों की वर्तनियाँ सही हैं. नाम के नीचे लेखकों के संबद्ध पते (जहां वास्तविक कार्य किया गया था)

प्रस्तुत करें. सभी लेखकों के ई-मेल को भी इंगित करें.

पत्राचार लेखक : स्पष्ट रूप से सुनिश्चित करें कि प्रकाशन के सभी चरणों और प्रकाशन के बाद भी पत्राचार कौन करेगा? पत्राचार लेखक का ई-मेल व पता दिया जाना चाहिए.

आलेख के अनुभाग और उप-अनुभाग : अपने लेख को परिभाषित वर्गों में विभाजित करें. प्रत्येक उपधारा को एक संक्षिप्त शीर्षक दें. प्रत्येक शीर्षक को अपनी अलग लाइन पर दिखना चाहिए.

सार : एक संक्षिप्त सार आवश्यक है. सार लेख / अनुसंधान का उद्देश्य, परिणाम और प्रमुख निष्कर्ष को संक्षेप में दर्शाता है. गैर-मानक या असामान्य संक्षेपों (Abbreviations) को टाला जाना चाहिए, लेकिन अगर आवश्यक है तो उन्हें प्रारम्भ में ही परिभाषित कर देना चाहिये. लेख में शोध पत्रों एवं समीक्षा लेखों के लिए अधिकतम लगभग 150 शब्द और शोध नोटों और संक्षिप्त लेखों के लिये लगभग 100 शब्द काफ़ी हैं.

शोधपत्रों में सामान्यता निम्न अनुभाग होते हैं :

परिचय : कार्य का उद्देश्य एक पर्याप्त पृष्ठभूमि के साथ प्रस्तुत करें. विस्तृत साहित्य सर्वेक्षण या परिणामों के सारांश से बचें.

सामग्री और विधि : काम का पर्याप्त विवरण दें जिससे कि उसे पुनः उद्धृत किया जा सके. पहले से ही प्रकाशित की गई विधियों / कार्य को एक संदर्भ से सूचित किया जाना चाहिए. इनमें उसके आगे किये गये कार्यों का उल्लेख अवश्य करें. केवल प्रयुक्त किये गये उपकरण, सॉफ्टवेयर, डेटा संग्रह विधि का उल्लेख किया जाना चाहिए.

चर्चा : इस अनुभाग में बिना दोहराये काम के परिणामों के महत्व का पता लगना चाहिए. एक संयुक्त 'परिणाम और चर्चा' अनुभाग अक्सर ज्यादा उपयुक्त होता है. व्यापक उद्धरणों और प्रकाशित साहित्य की चर्चा से बचें.

निष्कर्ष : अध्ययन के मुख्य अंश और परिणाम के संक्षिप्त निष्कर्ष इस अनुभाग में प्रस्तुत किए जा सकते हैं.

परिशिष्ट (Appendices) : यदि एक से अधिक परिशिष्ट हैं, तो उन्हें क, ख अथवा (i), (ii) आदि के रूप में लिखा जाना चाहिए.

तालिकायें/आंकड़े/ चित्रणः तालिकाओं को लेख में दी गई जानकारी को दोहराने की बजाय पाठ / लेख को पूर्णता देनी चाहिये. संक्षिप्त शीर्षक के साथ तालिका को स्पष्ट रूप से संख्यात्मक क्रम में लेख में निर्दिष्ट किया जाना चाहिए. तालिका में कॉलम शीर्षक संक्षिप्त व बोल्ड फ़ोंट मे होने चाहियें और माप की इकाई कोष्ठक में शीर्षक के नीचे होनी चाहिए. सभी तालिकायें और ग्राफ शीर्षक के साथ उपलब्ध होने चाहिएं. सभी आंकड़े (चार्ट, चित्र, रेखाचित्र और फोटोग्राफिक छवियां) उच्च गुणवत्ता के होने चाहिएं.

प्रतीकात्मक शब्दावली : लेखक अपने क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा विकसित किसी भी मानक इकाई और प्रतीकों का अनुसरण कर सकते हैं. संपूर्ण लेख में संक्षिप्ताक्षरों की स्थिरता सुनिश्चित करें.

भाषा (उपयोग और संपादन): कृपया अपने लेख के विषय को अच्छी हिंदी में लिखें (भारत सरकार या 'केन्द्रीय शब्दावली आयोग' द्वारा मान्यता प्राप्त मानक वैज्ञानिक शब्दावली) और उद्धरणों में अंग्रेजी के तकनीकी शब्दों की अनुमति है. भेजने से पहले, अपने लेख की वर्तनी की त्रुटियों को निकालें. संपूर्ण लेख में तकनीकी शब्दावली में उचित व्याकरण का उपयोग करें. समीक्षा, आंकड़ों व अलंकारों का उचित उपयोग सुनिश्चित करें. दशमलव बिंदु के उपयोग में संगतता रखें.

लेख में संदर्भ और उद्धरणः

कृपया सुनिश्चित करें कि लेख में दिए गए प्रत्येक संदर्भ, संदर्भ सूची में मौजूद हैं. उद्धरण में दिए गए किसी भी संदर्भ को पूर्ण रूप से दिया जाना चाहिए. लेख में उद्धरण होना चाहिए. (Devasagayam 2014), (मिश्रा 2015)

अप्रकाशित परिणाम और व्यक्तिगत संचार संदर्भ सूची में उद्धृत न करें. लेखक संबद्धता के साथ संदर्भ में डॉ.,श्री, श्रीमती आदि का उपयोग न करें. संदर्भ सूची को वर्णानुक्रमिक क्रम में व्यवस्थित किया जाना चाहिए.

उदाहरणः

1. Devasagayam, T.P.A.; Tilak, J.C.; Boloor, K.K.; Sane, K.S.; Ghaskadbi, S.S.; Lele, R.D. (2014) Free radicals and antioxidants in human health: Current status and future prospects; Journal of Association of Physicians of India , Vol. 52 (10), October 2004, Pages 794-804.

2. मिश्रा, हृषीकेश (2015) ,रेडियो रासायनिक संयंत्र में रासायनिक/ज्वलनशील सामग्री के भण्डारण में आकस्मित निःस्समन टैंक के फूटने का पर्यावरण पर प्रभाव, वैज्ञानिक, वर्ष-47(1), जन.-दिस., पृष्ठ 16-19. http://www.barc.gov.in/hindi/publication/vaigaynik_2015_01_12.pdf

यह सामग्री क्रियेटिव कॉमन्स ?ट्रीब्यूशन/शेयर-अलाइक लाइसेंस (Creative Commons Attribution 4.0 International License) के तहत उपलब्ध है. आप वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए इस सामग्री का उपयोग नहीं कर सकते हैं. अन्य शर्तों की जानकारी हेतु विस्तार से देखें: http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/.

हिंदी विज्ञान सहित्य परिषद

भाभा परमाणु अनुसन्धान केंद्र, मुंबई 400085

दूरभाष : 022-25595378 ई मेल : hvsp@barc.gov.in / singhkw@barc.gov.in

सदस्यता आवेदन पत्र

(परिषद के सदस्यों को वैज्ञानिक पत्रिका निःशुल्क भेजी जाती है)

कुलवंत सिंह
सचिव, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद
पदार्थ विज्ञान प्रभाग, मोड-लैब.
भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र, मुंबई-400 085

दिनांक :.....

मैं (नाम) .....आयु.....हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद का व्यक्तिगत आजीवन सदस्य बनना चाहता/चाहती हूं. रु.400/- का सदस्यता शुल्क चेक/ड्राफ्ट द्वारा 'हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद' के नाम से संलग्न है. कृपया मुझे परिषद का आजीवन सदस्य बनाएं. चेक/ड्राफ्ट का विवरण है.

चेक/ड्राफ्ट संख्या.....बैंक का नाम.....ब्रांच.....दिनांक .....

सदस्यता राशि ऑनलाईन ट्रांसफर की जा सकती है. ऑनलाईन ट्रांसफर के लिये विवरण है -

प्राप्तकर्ता का नाम : हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद (Hindi Vigyan Sahitya Parishad)

खाता संख्या - 34185199589 स्टेट बैंक आफ इंडिया, भा.प.अ.के. ब्रांच, ट्रॉम्बे, मुंबई-85

ISSN 2456-4818

ऑनलाइन ट्रांसफर करने के बाद कृपया विवरण ई मेल द्वारा भेज दें.

कार्यालय पता .....

निवास पता .....

फोन : ..... मोबाइल ..... ईमेल.....

शिक्षा ..... रुचि .....

प्रवीणता .....

वैज्ञानिक कृपया कार्यालय/निवास के पते पर भेजी जाए.

हस्ताक्षर

खगोल शास्त्री एवं गणितज्ञ आर्यभट

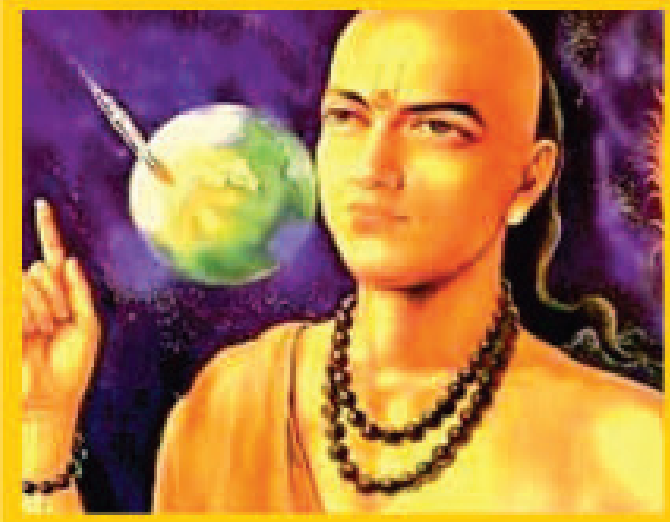

आर्यभट की प्रसिद्ध रचना 'आर्यभटीय' (गणित की पुस्तक) को कविता के रूप में लिखा गया है. यह प्राचीन भारत की बहुचर्चित पुस्तकों में से एक है 'आर्यभटिया' में अंकगणित, बीजगणित और त्रिकोणमिति और गोलीय त्रिकोणमिति के 33 नियम भी दिए गए हैं. इसमे सतत भिन्न (कँटीन्यूड फ्रेक्शन्स), द्विघात समीकरण (क्वड्रेटिक इक्वेशंस), घात श्रृंखला के योग (सम्स ऑफ पावर सीरीज़) और ज्याओं की एक तालिका (Table of Signes) शामिल हैं. आर्यभटीय में कुल 108 छंद हैं, साथ ही परिचयात्मक 13 अतिरिक्त हैं. यह चार पदों अथवा अध्यायों में विभाजित हैः (a) गीतिकपाद (b)गणितपाद (c) कालक्रियापाद (d) गोलपाद.

इस महान गणितज्ञ ने आर्यभटीय, दशगीतिका, तंत्र और आर्यभट सिद्धांत जैसे ग्रंथों की रचना की थी. 'आर्यभट सिद्धांत' का सातवीं शादी में व्यापक उपयोग होता था. सम्प्रति में इस ग्रन्थ के केवल 34 श्लोक ही उपलब्ध हैं और इतना उपयोगी ग्रंथ लुप्त कैसे हो गया इस विषय में भी विद्वानों के पास कोई निश्चित जानकारी नहीं हैं.

'कॉपरनिकस' से लगभग 1 हजार साल पहले ही आर्यभट ने यह खोज कर ली थी कि पृथ्वी गोल है और उसकी परिधि अनुमानतः 24835 मील है.

आर्यभटीय नामक महत्वपूर्ण ज्योतिष में वर्गमूल, घनमूल, समान्तर श्रेणी तथा विभिन्न प्रकार के समीकरणों का वर्णन है. उन्होंने इस ग्रन्थ में कुल 3 पृष्ठों के समा सकने वाले 33 श्लोकों में गणित के सिद्धान्त तथा 5 पृष्ठों में 75 श्लोकों में खगोल-विज्ञान के सिद्धान्त तथा इसके लिये यन्त्रों का भी उल्लेख किया.

आर्यभट ने 120 आर्य छंदों में ज्योतिष शास्त्र के सिद्धांत और उससे संबंधित गणित को सूत्ररूप में अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'आर्यभटीय' में प्रस्तुत किया है.

आर्किमिडीज से भी अधिक सटीक 'पाई' के मान को निरूपित किया और खगोलविज्ञान के क्षेत्र में सबसे पहली बार यह घोषित किया गया कि पृथ्वी स्वयं अपनी धुरी पर घूमती है.

संकलन : विपुल सेन

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) RNI. No.:18862/70

दिल्ली, नयी दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ.प्र. के शिक्षा विभागों द्वारा स्कूलों व कॉलेजों के लिए स्वीकृत।

सन् 498 में आर्यभट ने कहा 'स्थानं स्थानं दसा गुणम्
अर्थात् दस गुना करने के लिये (उसके) आगे (शून्य) रखो

वह जिन्होने पाई का अन्वेषण किया और विश्व को गणना सिखाई

भारतवर्ष के महान गणितज्ञ खगोल शास्त्री

पुणे में आर्यभट की मूर्ति 476-550

जन्म	दिसम्बर 476 अश्मक, महाराष्ट्र, भारत
मृत्यु	दिसम्बर 550 (उम्र 74)
निवास	भारत
राष्ट्रीयता	भारतीय
क्षेत्र	प्राचीन गणितज्ञ, ज्योतिषविद, खगोलज्ञ
संस्थाएँ	नालंदा विश्वविद्यालय
प्रसिद्ध कार्य	आर्यभटीय, आर्यभट सिद्धांत, पाई का अन्वेषण

* 'वैज्ञानिक' में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है. * वैज्ञानिक में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं.वि.सा.परिषद के पास सुरक्षित हैं. * 'वैज्ञानिक' एवं हिं.वि.सा.परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय मुंबई के न्यायालय में ही होगा. * 'वैज्ञानिक' में प्रकाशित सामग्री का आप बिना अनुमति लिए उपयोग कर सकते हैं. परंतु इस बात का उल्लेख करना अनिवार्य होगा कि अमुक सामग्री 'वैज्ञानिक' से साभार.

वैज्ञानिक के पुराने अंक वेबसाइट http://www.barc.gov.in/hindi/publication/index_sc_a.html पर उपलब्ध.

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद्, भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र ट्रांबे, मुंबई 400085 के लिए श्री विपुल सेन द्वारा सम्पादित, मुख्य व्यवस्थापक श्री सत्यवान बंसल द्वारा प्रकाशित. मुद्रक-निर्भय पथिक : Email:nirbhaypathik@gmail.com, फोन: 24153784, 98690 22787